दीदी
सितम्बर
१९५१
।।)

दीदी

प्रधान सम्पादिका

श्रीमती यशोवती तिवारी

सम्पादिका-समिति

महा माननीया श्रीमती विजयलक्ष्मी पंडित
रानी लक्ष्मीकुमारी रावतसर
श्रीमती रत्नकुमारी एम० ए०
श्रीमती कमला शिवपुरी बी० ए०, बी० टी०
श्रीमती चन्द्रकान्ता जेरथ बी० ए०
श्रीमती रजनी पनिकर एम० ए०
कुमारी विद्यावती विशारद

प्रबन्धक सम्पादक—श्रीनाथसिंह

पत्र व्यवहार का पता -
[illegible]वी संचालिका 'दीदी' कार्यालय
इलाहाबाद नं० २

विषय-सूची

कहानियां

लेख

कविताएँ

फुटकर

स्तम्भ

भारतीय स्त्रियों और कन्याओं की सचित्र मासिक पत्रिका

उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, बिहार और अन्य राज्यों द्वारा कन्या-शालाओं के लिये स्वीकृत

वर्ष १२ } इलाहाबाद, सितम्बर १९५१ { संख्या ९

राखी की प्रेरणा

लेखक, डा० सुधीन्द्र एम० ए०, पी० एच० डी०

राखी के धागे......
इन्हें देख कर मन के भीतर अमर भाव जागे !

अमर शक्ति की प्रतिमा नारी
उसने गूँथी इसमें प्यारी
अपनी आशा
अपनी भाषा
म म ता में पागे !
राखी के धागे !!

बहिन बांधती आई राखी,
अपने अमर प्रेम की साखी,
रक्षा का लो
कवच बँधा लो,
हाथ बढ़े आगे।
राखी के धागे।

मांगे क्या रक्षा की भिक्षा,
यह भाई की प्रेम - परीक्षा
वज्र कलाई
करने भाई
अब राखी मांगे !
राखी के धागे !!

सच्ची कहानियां

खुले सिर घूमने की सजा मौत

गत २० अगस्त को लुधियाना (पाकिस्तान) में एक २० वर्षीया विवाहिता मुसलिम युवती सिर खोले कहीं जा रही थी। युवती का मामा एक भारतीय मुसलिम था जो इसलाम की पूर्ण उपासना कर सकने के इरादे से पाकिस्तान में जाकर बसा था। उसने अपनी भांजी को देखा और क्रोध में आकर बोला—'भारत मैंने इसलिये नहीं छोड़ा कि तुम यहां सिर खोल कर चलो।'

'यहां कोई विधर्मी देखने वाला नहीं, इसलिये सिर खोल कर चलने में कोई हानि नहीं।' युवती बोली—'बेगम लियाकत अली भी सिर खोल कर चलती हैं।'

इस पर मामा को इतना गुस्सा आया कि वह [illegible] हुआ घर के अन्दर गया और एक गड़ांसा [illegible]या। उससे उसने युवती पर तब तक प्रहार [illegible]क्खा जब तक मर नहीं गई।

[illegible]टना स्थल पर ही ये मियां जी पकड़ लिये गये [illegible] उनका ख्याल है कि भारत में इस अपराध के [illegible]ये जरूर फांसी होती, पर यहां पाकिस्तान में छूट जाने की पूरी गुञ्जाइश है।

६ मास के पुत्र की हत्या

१० जून सन् १९४८ की बात है। मेरठ जिले के एक गांव में नौबत नाम के एक व्यक्ति ने अपने ६ मास के पुत्र की हत्या कर डाली। घटना इस प्रकार है:—

बच्चा केवल ६ महीने का था। माता कुएँ पर पानी भरने जाना चाहती थी, सो उसने अपने पति से कहा—'बच्चे को तब तक देखो ?'

बच्चा जोर-जोर से रो रहा था। सो पिता बोला, 'नहीं, मैं इसका जिम्मा नहीं ले सकता। तुम इसे भी अपने साथ ले जाओ।'

स्त्री ने पति की इस बात पर ध्यान नहीं दिया और पुत्र को रोता छोड़ पानी लेने चली गयी।

इस पर पिता को क्रोध आ गया। सो उसने गड़ासा उठाया और खप-खप-खप तीन बार बच्चे की गर्दन पर जमाया। सिर धड़ से कट कर अलग हो गया।

मां लौट कर आयी तो यह दृश्य देख कर चीख पड़ी। तुरन्त ही लोग जमा हुए। वह आदमी गिरफ्तार हुआ और उस पर मुकदमा चला।

मेरठ के सेशन जज ने उसे आजन्म कैद की सजा दी।

अन्त में यह मामला इलाहाबाद हाईकोर्ट में आया। हाईकोर्ट के जजों ने गत २१ अगस्त को जो फैसला दिया उसके अनुसार यह आदमी बेदाग छूट गया। अपने फैसले में जजों ने कहा कि हत्यारा पिता है और उसने अपने एक मात्र पुत्र की हत्या की है। यह सवथा अस्वाभाविक है। अतएव सेशन जज को देखना था कि यह आदमी पागल तो नहीं है। सात वर्ष पहले इसके पागल पन के सबूत पाये गये। तब वह जंजीरों में बांध कर रखा जाता था। एक बार इस आदमी ने आम का बाग लगाया था और फिर उजाड़ डाला था। सो जजों ने फैसला दिया कि बच्चे को मारने के समय यह जरूर पागल था और इसे छोड़ दिया।

चोरी फिर आत्म हत्या

गत २० अगस्त को गोरखपुर के एक छात्रावास में चिल्लाहट सुनाई पड़ी—'जले रे ! हाय मरे रे।' तुरन्त ही उसके गिर्द भीड़ जमा हो गयी।

लोग क्या देखते हैं कि छात्रावास के एक कमरे से जलते हुए कपड़ों में लिपटा एक विद्यार्थी बाहर निकला आ रहा है।

छात्रावास के आंगन में वह धड़ाम से गिरा और तत्काल मर गया।

पता लगाने पर मालूम हुआ कि कुछ दिन पहले उसने अपने साथी विद्यार्थियों की जब वे बाहर गये हुए थे, कुछ चीजें चुरा ली थीं। लोग उस घटना को भूल भी गये थे। परन्तु २० तारीख को उसने उन सबके सामने उपस्थित होकर अपना अपराध स्वीकार किया, चोरी की सब चीजें वापस कर दीं और क्षमा मांगी।

उसके बाद अपने कमरे में बन्द होकर अपने को बिस्तर में लपेट कर आग लगा ली और जब जलन की पीड़ा न सह सका तब चिल्लाया और बाहर निकल आया। बात की बात में यह सब हो गया। अपने जिन साथियों का कोप भाजन बन गया था, उन्होंने भी उसके लिये आंसू बहाये। पर अब पछताये होत क्या?

सिर कटी मुर्गी

अमेरिका के एक होटल वाले ने एक मुर्गी का सिर काट डाला और उसे मरी समझ कर छोड़ कर दूसरे काम में लग गया। पर थोड़ी देर के बाद जब उसने देखा कि वह सिर कटी मुर्गी धीरे-धीरे कमरे में घूम रही है तो उसके आश्चर्य का ठिकाना न रहा। उसने इस खबर को अखबार में छपवा दिया जिससे दूर-दूर से लोग उसे देखने के लिये आने लगे। सिर कटने के बाद पूरे एक वर्ष तक यह मुर्गी इसी प्रकार नुमाइस बनी रही। इसे एक रबड़ की नली द्वार गले से दूध पिलाया जाता था।

वस्त्र की समस्या सम्पूर्ण एशिया में बड़ी जटिल हो उठी है। फार्मोसा, वर्मा, श्याम, जावा आदि में इस समस्या को हल करने में विशेष परेशानी नहीं हुई, क्योंकि वहां घर-घर करघों की प्राचीन प्रथा अभी जारी है।
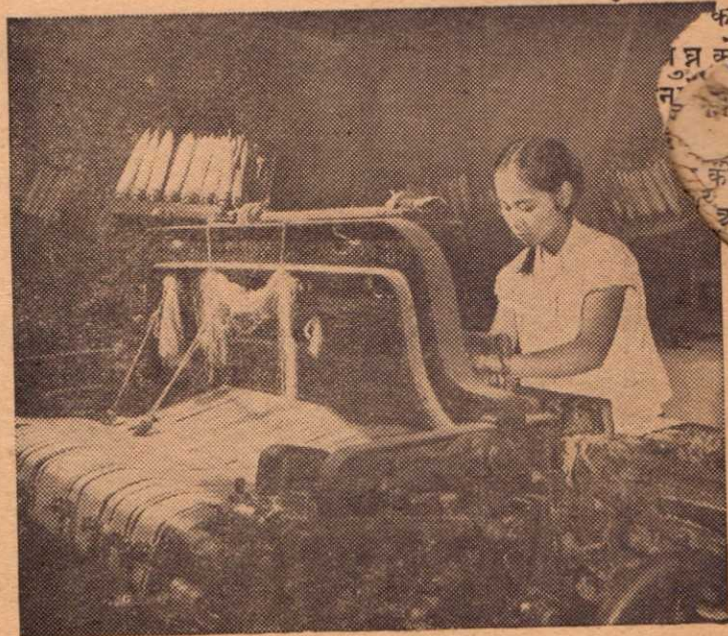
स्त्रियों का श्रृंगार

गहनों के सम्बन्ध में एक मजेदार बातचीत

लेखिका, श्रीमती उमा नेहरू

तारा बिना हाथों में चूड़ियां या कानों में कोई जेवर पहने दावत में गयी। उसके हाथ और कान नंगे देख कर पहले तो सारी स्त्रियों में सन्नाटा-सा छा गया। फिर कुछ मुसकुरायीं, कुछ ने त्योरियां चढ़ा लीं, कुछ जो उसके पीछे खड़ी थीं, उसके नंगे कानों और हाथों की ओर इशारा करके शोक और आश्चर्य प्रकट करने के लिये अपने हाथ सीनों पर रख कर धीरे-धीरे है-है है-है करने लगीं। फिर चारों ओर कुछ खुसफुस शुरू हुई।

उन स्त्रियों में से एक ने अन्त में कहा—बहन, क्या मेमें जेवर नहीं पहनतीं? यह तो एक शोभा की चीज है। जैसे मर्दों का शृङ्गार शस्त्र है, वैसे औरतों का शृङ्गार जेवर है। इससे चेहरे पर एक रौनक-सी आती है। सूरत अच्छी न भी हो तो भी एक बार चमक उठती है और बिना जेवर तो अच्छा-भला चेहरा भी सूना मालूम होने लगता है। इस बहू रानी को देखो, कानों में झुमके हैं, बालियां हैं, पत्ते हैं। नाक में लौंग है, गले में चन्दनहार, चम्पाकली है, हाथों में चूड़ियां हैं, लच्छे हैं। देखो तो सही कैसी सुन्दर माल सूरज-सी चमक रही है। देखने से जी खुश हो जाता है। तुम अपनी सूरत देखकर [illegible] का दिया सब कुछ है, मगर कैसी बनी [illegible] एक

तारा ने हस कर कहा—चम्पो ब[illegible] की भांति अपनी सूरत भी भली मालूम होती है। [illegible] अथोथा-

'भली क्यों नहीं मालूम होगी? [illegible] है। डालोगी, वैसी ही पड़ेगी। अभी तो अपनी [illegible] नथा भली मालूम होती है, थोड़े दिन जेवर और न पहना तो जो जेवर पहनते हैं उनकी सूरत बुरी मालूम होने लगेगी।'

वास्तव में चम्पो बहन ने सच कहा। हमारे खूबसूरती-बदसूरती के विचार बहुत कुछ हमारे रीति-रिवाज पर निर्भर होते हैं। जिस प्रकार जो हम करते हैं, करते-करते वही मर्यादा का रूप धारण कर लेता है, उसी तरह जो हम देखते हैं, देखते-देखते हमें वही अच्छा और ठीक प्रतीत होने लगता है। यही कारण है कि भिन्न-भिन्न समाजों में तरह-तरह के सौन्दर्य के आदर्श और शृङ्गार के ढङ्ग प्रच-

लित हो गये हैं। हबशियों के एक समूह की स्त्रियां अपने ओठों को चीर कर उनमें काठ के टुकड़े पहन लेती हैं। जितना यह लकड़ी का टुकड़ा बड़ा हो, उतना ही उनका शृङ्गार अधिक ललित समझा जाता है। एक दूसरा समूह अपनी स्त्रियों की गर्दनों में बालपन से ही एक लोहे की कमानी लगा देता है, जिसका नतीजा यह होता है कि युवावस्था तक पहुँचते पहुँचते इस समूह की स्त्रियों की गर्दनें खिचकर हाथ हाथ भर लम्बी हो जाती हैं। यदि इन गर्दनों में से कमानी निकाल ली जाय तो सिर नीचे को ढुलक पड़ता है, क्योंकि गर्दन में सिर को सीधा रखने की शक्ति ही नहीं रह जाती। फिर भी इस समूह के लोगों को स्त्री की 'सुराहीदार' गर्दन पसन्द है और इनके यहां वही स्त्री अति मनोहर समझी जाती है, जिसकी गर्दन अधिक से अधिक लम्बी हो। चीन में स्त्री के छोटे छोटे पैर अति सुन्दर और सभ्य समझे जाते हैं। इसी लिये पुत्री की जन्मघड़ी से वे ऐसे कुचले जाते हैं कि युवावस्था तक पहुँचते पहुँ- [illegible] फोड़े बन कर रह जाते हैं। ये 'सभ्य' [illegible] पैरों वाली स्त्रियां अपने घर तक में [illegible]सरी ओर केवल तारों के सहारे आ- [illegible]। जो इनमें से बिना तारों की सहायता [illegible] सकती हैं, उन्हें बड़े छोटे पग धर कर [illegible] थिरक कर चलना पड़ता है। परन्तु उन [illegible] दुःख भरी अप्राकृतिक चाल में चीन के पुरुषों और शायद स्वयम् वहां की स्त्रियों को समस्त संसार के शृङ्गार का सार दिखाई पड़ता है। जापान की स्त्रियां किसी मसाले से अपने सारे दांत बिलकुल कोयले-से काले कर लेती हैं, जिनकी कालिख उम्र भर निकाले नहीं निकलती। शायद उन्हें मोती से दांत नहीं सुहाते। पश्चिम की स्त्रियां बचपन से ही लोहे की पटरियां लगी हुई चौड़ी-चौड़ी पेटियां बांध बांध कर अपनी कमर ऐसी 'पतली' बना लेती हैं कि जिस्म की कौन कहे, उनके सीने की नीचे की पसलियां तक स्थायी तौर पर कुचल कर रह जाती हैं। हबशियों की लम्बी गर्दन के समान इन स्त्रियों के सौन्दर्य के आदर्श का पतली कमर एक विशेष अंग है। बहुत-सी पश्चिमी रूपवतियों के लिये दांतों का असमान होना इतना असहनीय हो जाता है कि जवानी अथवा बालपन में ही वे अपने सारे दांत निकलवा कर उनके स्थान पर मनमाने बनावटी दांत लगवा लेती हैं।

इन सब मिसालों में एक विशेष ध्यान देने योग्य बात यह है कि यह ओठों में चार अंगुल चौड़े काठ के टुकड़े पहनने वाली स्त्री, यह फुट फुट भर लम्बी कमानीदार गर्दन वाली महिला, यह पैर कुचली हुई चीनी सुन्दरी, यह कमर जखमी सीने और पीठ की हड्डियां टेढ़ी की हुई बनावटी दांतों वाली पश्चिमी रूपवती—ये सबकी सब अपने अपने समाज के रमणी-रत्न हैं। इन रमणी रत्नों ने सामाजिक सौन्दर्य में निपुणता प्राप्त करने की उमङ्ग में दुःख-सुख का ख्याल न करके अपने अभागे शरीर को सामाजिक सौन्दर्य के सांचे में सर्वथा ढाल दिया है। इसलिये इन सारी दुःख भरी घटनाओं की जिम्मेदारी इन अभागिनियों पर नहीं हो सकती, बल्कि समाज पर है और उन पर है जो रीति-नीति निश्चित करते हैं।

उपर्युक्त हबशी, चीनी, जापानी, पश्चिमी महिलाओं के समान उपर्युक्त 'बद्दू' भी एक आदर्श महिला है जिसने अपने कान, नाक में बीसों छेद कर उनमें रंग-बिरंगे लटकन लटका अपने आपको सामाजिक शृङ्गार के सांचे में ढाल दिया है। परन्तु जब हम उनके शृङ्गार को मर्यादा की ऐनक उतार कर देखते हैं तब सूरज के समान चमकने के स्थान पर हमें उनके चेहरे पर एक विचित्र पतन—एक अनन्त दासत्व—की फिटकार ही बरसती दिखाई देती है।

[२]

चम्पो बहन के तानों और दलीलों का उत्तर तारा देने भी न पाई थी कि विद्या बीच में बोल उठी, उसने कहा—भई चम्पो बहन, तुम भी खूब हो। बहस करने बैठी हो, वह भी उलटी। यह संवार-फिटकार का क्या दुखड़ा ले बैठीं! अगर जेवर पहनना केवल चेहरे की शोभा बढ़ाता है तो अपने ऊपर

सब को इख्तियार है। जिसका जी चाहे शोभा बढ़ाये, जिसका जी न चाहे न बढ़ाये। इसमें किसी का क्या इजारा है? मगर हां, यह कहो कि जेवर से ही हमारे यहां कुमारी, सधवा और विधवा की पहचान की जाती है। इसलिये इसका पहनना आवश्यक है।

'अहा, क्या बात निकाली है! यह लो, यह बूझ बुझक्कड़ बोली। क्यों बहन, यदि हमें पहचान ही करवानी है तो हम एक काली, लाल या हरी तख्ती ही न गले में लटका लें और समाज से कह दें कि वह लाल से कुमारी, हरी से सधवा और काली से विधवा समझ लिया करे। कान, नाक का खून करके उनमें बीसों लटकन लटकाने की क्या जरूरत है? दूसरे किसी को यह जानने से क्या मतलब कि हम क्या हैं? हम जो कुछ भी हैं अपने लिये हैं। उसका ढिंढोरा क्यों पीटें? मैं बहस जल्दी करती हूं। तुम आयीं वहां से मेरा मुँह काट के सीधी बहस करने। क्यों बीबी लाल बुझक्कड़, अगर वह ढिंढोरा समाज के हित के लिये जरूरी था तो पहले तो यह मर्दों को पीटना चाहिए था, क्योंकि वह तमाम दुनिया में घूमते, फिरते हैं। औरत बेचारी तो इने-गिने लोगों से मिलती है, इने-गिने घरों में जाती है...ऐं च ख चीख कर मेरे कान खा गई।...आती हूं...अरी आती हूं...तारा, जरा मैं इसकी सुन आऊँ। ठहरी रहना। आज मैं तुझे कायल करके रहूंगी।'

स्त्रियां तो तारा जैसी समाज की अपराधिनियों के पीछे ही प[ड़]ी रहती हैं, परन्तु इनपर पुरुषों की भी एक विशेष कृपा दृष्टि रहती है। ऐसे ही एक महोदय अवसर पाकर बोले। उन्होंने कहा—'सुनिये तारा जी, यह चम्पो बहन तो वाही-तबाही बकती है, मगर तुम्हें देख कर हमें विश्वास हो गया कि औरत को कभी अक्ल नहीं आ सकती। भला तुम्हीं बताओ कि जो अपने पांव में खुद ही कुल्हाड़ी मारे उसे कौन अक्लमन्द कह सकता है? तुम जेवर नहीं पहनतीं, औरों को भी मना करती हो। इसमें किसका नुकसान है? औरतों का या मर्दों का? औरतों के पास यही एक पूँजी होती है। घर का फालतू रुपया इसी रूप में उनके पास पहुँच जाता है। अगर औरतें जेवर पहनना छोड़ दें तो मर्द तो बहुत खुश हों। उनके सिर से एक मुसीबत हटे। मगर औरत तो कहीं की भी नहीं रहेगी। यही एक तरीका है जिससे उसके पास कुछ जमा हो जाता है, जो समय पर उसके काम आ सकता है। अब बताइये कि जेवर छोड़ कर तुम यह साबित कर रही हो या नहीं कि औरत को पढ़-लिख करके भी अक्ल नहीं आ सकती।'

इस पर उन्हीं के एक दूसरे भाई ने कहा—'देखिये भाई साहब, आप बोलेंगे तो मैं भी बोलूँगा। मैं इस बात पर खास गौर कर चुका हूं। मेरी राय में जो तरीका मर्दों ने स्त्रियों को पूँजी देने का प्रचलित किया है वह बड़ी मूर्खता का है। इसमें स्त्री-पुरुष, समाज सभी की हानि है। यों देखिये। मान लीजिये कि कोई दो सौ रुपये अपनी पुत्री या स्त्री को जेवर की सूरत में देता है तो पहले इसमें से बनवाई कम हो जाती है, फिर कुछ खोट-खोट की सूरत में कम होता है, फिर ज्यों ज्यों वह पहना जा[ता है], बराबर उसकी कीमत कम ही होती जा[ती है, यहां] तक कि दस वर्ष के बाद यह फर्क [illegible] एक पहुँच जाता है। अब अगर यही दो [illegible] की भांति पुत्री या स्त्री बैंक में या किसी कोठी [illegible] अथोथा-देतो या इसकी ओर से जमा किये जाते [illegible] है। में ये कम होने के स्थान पर ड्योढ़े या [illegible]ना जाते। इसी तरह आप अन्दाजा कर सकते है [illegible] इस समय स्त्रियों का कितना रुपया इसी तरह अटका पड़ा है और उन गरीबों को कितने लाख रुपये साल का नुकसान हो रहा है।'

'क्या खूब! यों कहिये तो अगर वही दो सौ रुपया इधर-उधर छोटे-मोटे फायदे की बातों में लगाया जाय तो दस वर्ष में ड्योढ़े की जगह दसगुना हो जा सकता है। मगर सवाल तो यह कि कितनी औरतें अभी बैंकों में रुपया जमा करना जानती हैं और कितने औरत-मर्द यह जानते हैं कि किस तरह छोटी-मोटी बातों से रुपया बढ़ाया जा सकता है।

फिर जब वह यह सब तो जानती नहीं और जेवर भी छोड़ बैठे तो उसका फायदा होगा या नुकसान?'

'खूब, खूब, यह जेवर छोड़ बैठने की आपने खूब कही! आपकी राय में तारा जी ने जेवर पहनना छोड़ा, और तमाम भारत की स्त्रियां जेवर पहनना छोड़ कर बैठ गयीं। अरे साहब, यह तो एक आदर्श है। अगर यह भाव फैला तो पहले समझदार पढ़ी-लिखी स्त्रियों में फैलेगा। फिर उनके जरिये औरों तक पहुँचेगा। धीरे धीरे इसके अनुगामियों की संख्या बढ़ती जायगी और ज्यों ज्यों यह संख्या बढ़ेगी, वैसे वैसे ही स्त्रियों का ध्यान अपने रुपये को बैंकों में रखने की तरफ या उससे और फायदा उठाने की तरफ आकर्षित होता जायगा। असल बात यह है कि औरतें तो अब भी राजी हो जायँ, मगर अक्ल की कमी तो मर्दों में है जो न अपने को सुधारते हैं, न स्त्रियों को।'

'खैर, मैं आपसे बहस करना नहीं चाहता। मैं तो तारा जी से अपनी बात का जवाब चाहता हूं।'

[illegible] कुन्दा ने उत्तर दिया—'जेवर पहनने से रुपये का [illegible] है या नुकसान, मेरा इस प्रश्न से कोई [illegible] मैं जेवर को स्त्री की वास्तविक उन्नति [illegible] वाली वस्तु समझती हूं। इसलिये मैं [illegible] से इनकार करती हूं।'

[illegible]...लो, मैं लौट आई। मैंने सुन लिया [illegible] जेवर पहनने से इनकार करती हो। मगर [illegible], सुन तो सही। तुम जेवर नहीं पहनती हो न पहनो, मगर कम से कम हाथ-कान में सुहाग की चीजें तो डाल लिया करो।...क्या!...मैं तुम्हें सुहाग के माने समझाऊँ?...ठीक है!!!...तुम नहीं जानतीं कि सुहाग किसे कहते हैं? सुहाग कहते हैं माथे के तिलक को, हाथों की चूड़ियों को। किसी का सुहाग नथ होता है, किसी की कंठी और किसी का सुहाग बिछुये होते हैं।...क्या?...क्या?...ये सब वे चीजें हैं जिनसे सुहाग जाहिर किया जाता है? फिर क्या चीजें नहीं तो सुहाग क्या कोई काली-पीली चिड़िया होती है...? मैं नहीं समझती, तुम कहती क्या हो। अब समझी! तुम यह जानना चाहती हो कि ये चीजें क्यों पहनी जाती हैं? ये इसलिये पहनी जाती हैं कि दुनिया को मालूम हो कि तुम्हारा मालिक जिन्दा है, तुम सौभाग्यवती हो, ईश्वर की तुम पर कृपा है।'

'वाह चम्पो बहन जी, वाह! अब आप खुद लाल-बुझक्कड़ बन गयीं। मैंने जब यही कहा था तब आपने मेरा गला घोंट डाला था। ये तो कहती थीं कि कोई अपने क्वारेपन का, अपने बेवा होने का, अपने सधवा होने का ढिंढोरा क्यों पीटे! दुनिया से क्या मतलब है कि हम सधवा हैं या विधवा हैं और अगर दुनिया से मतलब है तो मर्द क्यों नहीं अपनी स्त्री के जिन्दा होने या मरने का ढिंढोरा पीटते। अब आप खुद ही घूम-फिर कर वहीं पहुँच गयीं। आप जेवर की उपयोगिता साबित कर रही हैं या दुनिया का गोल होना।'

'तू बात बात में टांग अड़ाती है। मैंने तो तारा से पूछा है। वह मेरा जवाब देगी।'

तारा ने उत्तर दिया—'यदि सुहाग की चीजें केवल स्त्री का सधवा होना दिखाती हैं तो यह अनावश्यक है। अगर इनका अर्थ सौभाग्य प्रकट करना है तो मेरी सम्मति में अपने सौभाग्य को कान, नाक, गर्दन, पांव इत्यादि में पहनने की चेष्टा करना अनावश्यक होने के साथ साथ विचित्र भी है।'

'तो बेटी, तू जाने तेरा काम जाने। मैं तो इससे कहती थी कि तेरा कच्चा साथ है। अभी दो-दो बेटियां तेरे सामने हैं। जब तेरे ये ढंग होंगे तब बिरादरी में इन्हें कौन लेगा? आदमी को आगा-पीछा सोच कर काम करना चाहिए। न सिर ऊँचा करे न टक्कर खाये...हां! हां!...अरी आती हूं... ...यह तो मेरा कलेजा खा गयी।'...

चम्पो जी ने चलते-चलते सुहाग और बिरादरी के दो बड़े महत्व के प्रश्न उठाये। बिरादरी की खुशी खफगी के सम्बन्ध में हम इस स्थान पर केवल इतना ही कहेंगे कि यही समाज की कुरीतियों को अनन्त जीवन प्रदान कर देने वाला मूल मन्त्र है। रहा

सुहाग का आदर्श, सो वह हमारी सम्मति में स्त्री की आत्मा पर वैसा ही प्रभाव डालता है, जैसा जेवर की मर्यादा स्त्री के शरीर, स्वास्थ्य और स्वतन्त्रता पर डालती है। जेवर की मर्यादा को सुहाग के आदर्श पर कायम करना मानो इस मर्यादा के विषमय प्रभाव को स्त्री के शरीर से उसकी आत्मा तक पहुँचा देना है। सुहाग के आदर्श को ध्यान पूर्वक देखने से हमें इस प्रश्न की सत्यता का निश्चय हो जाता है।

मानव समाज में स्त्री सदा से पुरुष के अधीन और आश्रित रही है। आत्म निर्णय का अधिकार इसे कभी प्राप्त नहीं हुआ। इसलिये सधवा होना प्रत्येक स्त्री के जीवन की एक ऐसी महत्वपूर्ण घटना है, जिसका स्मरण एक क्षण के लिये भी भुला देना मानो स्त्री का अपने अन्नदाता का अपमान करना है। इस स्मृति को सदा समाज और स्त्री के सम्मुख रखने के लिये सुहाग का आदर्श रचा गया है। इस आदर्श का मर्म यह है कि एक ओर तो पुरुष का ऐश्वर्य, दूसरी ओर स्त्री का दासत्व सम्पूर्ण रीति से स्त्री की आत्मा पर चित्रित हो जाय। अपने हाथ, कान, नाक अथवा पांव में पति के जीवित होने के चिह्न पहन कर यह अभागी स्वयम् अपनी आत्मा अथवा संसार को यह निश्चित कराती रहे कि 'इस धनहीना का धन, इस बलहीना का बल, इस अबोध का पथ प्रदर्शक अभी जीवित है।' जिस प्रकार जेवर पहनने की मर्यादा हमारे शरीर की स्वतन्त्रता को ले कर उसे अपना प्राकृतिक बल और कद प्राप्त करने में असमर्थ बना देती है, उसी प्रकार अपने 'बलहीना' 'धनहीना' और 'अबोध' होने का ख्याल हमारी आत्मा की वास्तविक उन्नति का विनाश कर देता है। हम में स्वाभिमान, स्वावलम्बन और स्वाधीनता के भाव उत्पन्न ही नहीं हो पाते। पुरुष के बल, धन और ज्ञान की छाया स्त्री के लिये घातक सिद्ध होती है। सुहाग इस छाया का प्रत्यक्ष रूप है। इसलिये जो लोग स्त्री को समाज का केवल एक शुष्क अंग रख कर भावी उन्नति और विकास में बाधा डालना नहीं चाहते उन्हें इस आदर्श का अवश्य परित्याग करना होगा।

गद्य गीत

लेखिका, श्रीमती सुशीला कमलेश 'सरिता'

तुम्हें अप्रत्यक्ष देख कर ही मेरे मन में तुम से कुछ मांगने की इच्छा होती है, परन्तु जब तुम प्रत्यक्ष हो जाती हो तो मैं सब कुछ भूल जाती हूं। समझ ही नहीं पाती कि मुझे क्या मांगना था। भूली हुई सी देखती रह जाती हूं। तुम्हारा स्वागत-सत्कार तक भूल जाती हूं, सोचती हूं, तुम अपनी ही तो हो।

अपने खेल में जब मैं मस्त होती हूं अन्य बालाएँ जब मेरा उपहास कर रही होती हैं, तब तुम चुपके-चुपके आकर कुछ देखा करती हो। पर मुझे तो तुम्हारा भान ही नहीं हो पाता। बाद में [illegible]था साथिनें जब मेरी मूर्खता पर हँस देती हैं तो मैं केवल लजा कर ही रह जाती हूं।

सदैव 'मां मां' कह कर तुम्हें पुकारती हूं परन्तु जैसे हो तुम मेरे मन-मन्दिर में प्रवेश करती हो वैसे ही मुझे विस्मरण हो आता है। तुम खड़ी-खड़ी हँसती रहती हो, मेरी भूल पर मुझे कोई दण्ड नहीं देती हो। यों ही चल देती हो, इससे मुझे बहुत पीड़ा होती है मां!

गर्भिणी के कर्तव्य
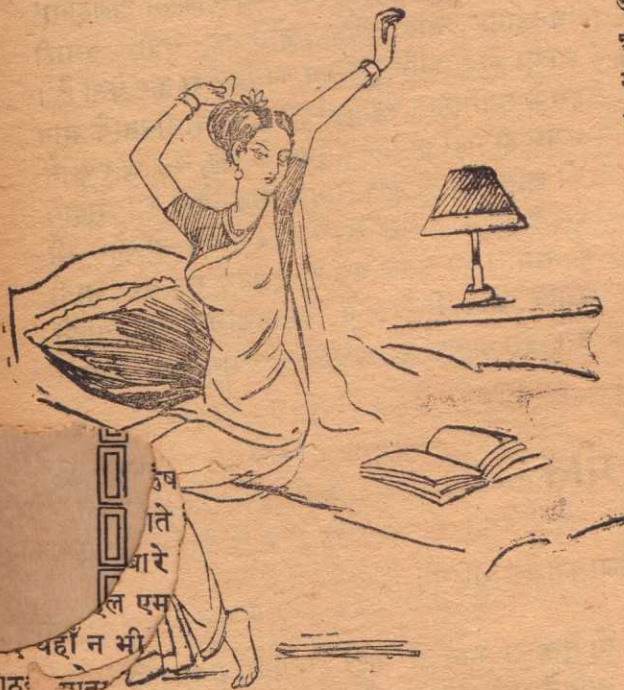
नारी के लिये भावी शिशु की कल्पना ही एक मधुर स्पन्दन है। जिस घड़ी नारी को यह विश्वास हो जाता है कि उसकी गोद भरने वाली है, उसके आनन्द का कोई ठिकाना नहीं रहता। प्रथम शिशु के आगमन की वह व्यग्रतापूर्वक प्रतीक्षा करती है। हर समय उसकी ही याद में आत्म-विस्मृत सी रहती है।

विधाता ने सृष्टि का क्रम नारी पर ही आश्रित रक्खा है। सृष्टि रचना का सम्पूर्ण उत्तरदायित्व उसी पर है। चूँकि नवीन जीवों का संसार में पदार्पण उसी के द्वारा सम्भव है, अतः गर्भावस्था में उसके आहार-विहार पर काफी ध्यान देना चाहिए। माताओं के स्वास्थ्य पर ही भावी शिशु का स्वास्थ्य निर्भर है।

प्रफुल्लता—प्रफुल्लता ही मानसिक स्वस्थता की कुञ्जी है; अतः गर्भिणी को भूल कर भी उदास या मुँह लटकाये रहना ठीक नहीं। गर्भस्थ शिशु पर इसका बड़ा घातक प्रभाव पड़ता है। इसीलिये जरूरी है कि मातायें अपने दैनिक एवम् मानसिक शुद्धि पर पूरा ध्यान दें। स्वस्थ एवम् पवित्र मानसिक विचारों पर ही शरीर की स्वस्थता निर्भर है। चिन्ता एवम् उदासी का प्रभाव शिशु पर निश्चित रूप से पड़ता है। अतः भावी माताओं को अपनी मानसिक शान्ति बनाये रखने के लिये आवश्यक है कि सदा प्रफुल्लचित रह कर वह अपने विचार पवित्र रक्खे।

व्यायाम—स्वस्थ रहने के लिये नित्य प्रति कुछ शारीरिक व्यायाम का करना नितान्त आवश्यक है। इससे शरीर चुस्त, दुरुस्त रहता है एवम् प्रसव काल में कोई कठिनाई या असुविधा का सामना नहीं करना पड़ता। व्यायाम करने से भोजन पचता है, गहरी नींद आती है एवम् दिमाग खुश रहता है। हल्के व्यायाम तो वे आसानी से कर सकती हैं। कुछ न भी करें तो सुबह शाम खुली हवा में टहलना ही चाहिये ताकि रक्त का संचालन भली-भांति होता रहे एवम् मांस पेशियां भी सुपुष्ट हों। पिछले छः महीनों में तैरना, साइकिल चढ़ना अथवा टेनिस

लेखक,
डाक्टर एम० पी० रंजन,
आसनसोली

आदि के खेल बन्द हो जाने चाहिये अन्यथा गर्भपात होने का भय रहता है। व्यायाम उतना हो करे कि थकावट न आ जाय। हां, नित्य के हल्के घरेलू काम अवश्य करते रहना चाहिये। अधिक परिश्रम से ही गर्भस्राव का खतरा पैदा होता है। खुली हवा एवम् धूप शरीर को स्वस्थ रखने के आवश्यक साधन हैं।

कोष्ठ-बद्धता—गर्भावस्था में कब्जियत की शिकायत अक्सर सुनी जाती है। पैखाना रोज खुलासा होना बहुत ही जरूरी है, वर्ना शरीर के बिकार (गन्दे पदार्थ) जमा होकर जहर की भांति खून में फैल कर हानि पहुँचाते हैं। बवासीर, गुर्दे में तकलीफ आदि रोगों का जड़ यही है। गर्भावस्था के अन्तिम दिनों में कब्जियत के कारण आंतों पर दबाव पड़ता है। अधिक पानी पीने एवम् ताजे फल खाने से यह शिकायत रहने ही नहीं पाती। उषःपान भी बड़ा ही लाभकारी है। सुबह उठते ही एक लोटा बासी जल पीना चाहिए ताकि आंतों का सारा मल धुल-धुल कर निकल जावे। भोजन के अनन्तर एवम् रात में सोते समय भी काफी पानी पीना चाहिये। आवश्यकतानुसार हल्का जुलाब या 'एनिमा' भी दिया जा सकता है।

चिन्ता, अधिक भोजन, अधिक परिश्रम एवम् पानी कम पीने से अनपच तथा हृदय दाह होता है। विश्राम, हल्का सा उपवास एवम् खूब पानी पीने से यह शिकायत जाती रहती है। पानी में एक चुटकी सोड़ा मिला देने से ही काम चल जाता है।

स्नान—नित्य कर्म में स्नान का भी बड़ा महत्वपूर्ण स्थान है। विशेषत: गर्मी के दिनों में जब पसीना अधिक चलने से बदन महकने लगता है। शरीर के विकार चूंकि पसीने द्वारा ही बाहर निकलते हैं, अत: स्नान के समय चमड़े की सफाई पर पूरा ध्यान देना निहायत जरूरी है। अत: इसके लिये आवश्यक है कि गर्म पानी से बदन रगड़-रगड़ कर काफी देर तक स्नान किया जाय एवम् बाद में ठंढा पानी डाल लेना चाहिये।

दांत की सफाई—अपने दांतों की पूरी हिफाजत करनी चाहिए। गन्दे दांत एवम् मसूड़ों से माता एवम् गर्भस्थ शिशु दोनों को ही नुकसान पहुँचता है। दिन में दो बार भोजन के बाद मुँह धोना आवश्यक है। मसूड़ों में मजबूती लाने के ख्याल से नमक एवम् सरसों का तेल द्वारा मसूड़ों की मालिश करनी चाहिये।

भोजन—माता के स्वस्थ रहने एवम् गर्भस्थ शिशु के विकास के लिये इन दिनों सन्तुलित भोजन का प्रबन्ध परमावश्यक है। याद रहे, भोजन हमेशा हल्का, सुपाच्य एवम् ताजा रहे। गर्भावस्था में कैलशियम की बड़ी कमी हो जाती है, अत: विशुद्ध गाय का दूध का सेवन नियमपूर्वक होना चाहिए। गर्भावस्था में हरी तरकारी एवम् फल का प्रयोग हितकर है। स्मरण रहे कि गर्भिणी ठीक समय पर भोजन कर ले ताकि अनपच न होने पावे। भोजन में सभी पोषक तत्वों का होना बहुत जरूरी है।

पानी का भी अपना स्थान है। माता एवम् [illegible] के शारीरिक विकारों के बाहर निकालने क[illegible] जरिया है, पेशाब अथवा पसीना। अत[illegible] एक पीना चाहिए। इससे शरीर की गन्दगी घु[illegible] की भांति पेशाब एवम् पसीना के द्वारा बाहर निकल [illegible] अथोथा- गुर्दे भी स्वस्थ एवम् मजबूत बने रहते हैं। र[illegible] है। से कम तीन सेर पानी पीना चाहिये। [illegible]तथा

विश्राम—गर्भिणी के लिये विश्राम की भी बड़ी जरूरत है। उसे उचित है कि सूर्योदय के पूर्व उठे एवम् नित्य क्रिया के अनन्तर अपना दैनिक कार्य सम्पादन करे। दोपहर में भोजनादि के उपरान्त कम से कम दो-तीन घंटे आराम जरूर करे। इससे गर्भ के बोझ से बचाव, रोगों से रक्षा एवम् बच्चे की पोषण शक्ति में वृद्धि होती है।

सोने के कमरे अलग हों एवम् काफी हवादार रहें। खिड़कियां हमेशा खुली रहें ताकि शुद्ध हवा का प्रवेश रहे। बिछावन हल्के एवम् मुलायम, चादर साफ एवम् तकिया भी आरामदेह हों। सर्दी के झोंके

से बचने का पूरा प्रबन्ध रहे। रात में कम से कम आठ घंटे अवश्य सोना चाहिये।

स्तन एवम् पेट की रक्षा—गर्म पानी एवम् साबुन से स्तन को नित्य धोकर रूखड़े तौलिये से हल्की मालिश करनी चाहिये ताकि रक्त-सञ्चालन भली-भांति हो। चुचुक के सुन्दर रखने एवम् फटने न देने के लिये उँगली में तेल लगा कर रगड़ना चाहिए। स्नान के बाद कुसुम तेल लगा कर पेट की हल्की मालिश होनी चाहिए। इससे चमड़ा फैलता है जिससे शिशु जन्म के बाद पेट के चमड़े के फटने का अन्देशा नहीं रहता।

वस्त्र—मौसम पर निर्भर है। कपड़े हल्के एवम् ढीले हों। अंगों का हिल-डोल हो सके। अनावश्यक ठंड न लगने पावे, सांस भली-भांति ली जा सके। पेट या स्तन पर दबाव न पड़ सके। चोलियां सिर्फ सहारे के लिये रहें, कसी न हों। लटकते पेट के लिये निचले भाग पर बेल्ट, मोजे के गाटर खुले अथवा ढीले नहीं तो पैरों में सूजन का भय। जूते आरामदेह एवम् ढीले, बहुत तंग नहीं। ऊँची एड़ियां एवम् रबर के जूते व्यवहार में नहीं लाना चाहिए।

विविध—कभी-कभी पैरों में एवम् जांघ में ऐंठन होने लगती है। किसी नस के ऊपर बच्चे का दबाव पड़ने से ऐसा होता है। मालिश एवम् सेंक से ही यह तकलीफ जाती रहती है।

मूत्राशय पर दबाव पड़ने से पेशाब जल्दी-जल्दी होता है। दर्द न हो तो चिन्ता की कोई बात नहीं। पैरों का सूजन भी स्वाभाविक है। मैथुन का त्याग तो सर्वश्रेष्ठ परन्तु सम्भव न हो छठें मास के बाद बिलकुल बन्द।

राह बदल लें

लेखिका, श्रीमती सुशीला बी० ए० साहित्य रत्न

[illegible]थी, हम राह बदल लें!
आश नई, विश्वास पुराना,
पायेंगे हम कभी किनारा।
बदलें नौका साज पुराना,
भँवरों वाला मार्ग हमारा।
नव बल, नव उत्साह साथ ले,
उन लहरों से डांड मिला लें।
अब हम अपनी राह बदल लें।

कब से यों इस पथ पर चलते,
आश थकी, विश्वास घिसे हैं।
साहस ने भी बल छोड़ा अब,
मन आंखों ने रुख बदले हैं।
परिवर्तन में भी गति आशा,
हम पिछले विश्वास बदल लें।
अब हम अपनी राह बदल लें।

पिछले पथ के अनुभव अपने,
बनें सहायक इस नव पथ के।
हो प्रयोग दृढ़तर पहिले से,
हिचकें क्यों शङ्कित मन करके।
पिछले जो कटु संकट अपने,
हँस कर उनकी चर्चा कर लें।
अब हम अपनी राह बदल लें।

जब प्रयोग को मिली जिन्दगी,
आश न छोड़ें जब तक जीवन।
अपना तो वश है कर्मों तक
उसमें कोर कसर रखें न।
पार निराशा के नद करके,
आज सफलता-सरिता तर लें,
अब हम अपनी राह बदल लें।

संसार की सबसे धनी लड़की

लेखक, श्री राजहँस

संसार की सब से धनी लड़की अत्यन्त साधारण, नीरस जीवन बिताती है। वह नहीं जान पाती कि अपनी विशाल सम्पत्ति से सुख का एक क्षण भी वह कैसे प्राप्त करे। इस समय वह प्रायः १५ करोड़ रुपये की अधिकारिणी है। पर १५० रुपये मासिक पाने वाले व्यक्ति भी उससे अधिक सुखी होंगे। उसे लोग अक्सर 'बेचारी धनी लड़की' कहते हैं। उसके प्रतिदिन के जीवन में, रहन-सहन में तनिक भी विशेषता न रहने पर भी सम्वाद पत्रों के रिपोर्टर और फोटो लेने वाले उसे सब समय परेशान किये रहते हैं।

यह लड़की अमेरिकन है। उसका नाम है डोरिस ड्यूक। वह अधिकतर अपने घर के भीतर ही बन्द रहती है। जब कभी वह बाहर निकलती है तब उस के लिये पूरी तैयारियां करनी पड़ती हैं। तीन सशस्त्र जासूस अलक्षित रूप से, सादे वेष में इसके इर्द-गिर्द रहते हैं। डाकुओं और बदमाशों से उसकी रक्षा के लिये।

रक्षकों के रहते हुए भी उसके मन में यह आशंका सब समय बनी रहती है कि न मालूम कब कौन गुंडा, चोर या लुटेरा आकर उसका गला छुरे से काट बैठे, या पेट में छुरा भोंक बैठे। इस भय से वह गहने भी अधिक नहीं पहनती है। एक बार जब उसकी इच्छा समुद्र के किनारे नहाने की हुई तब वह तीन वर्ष के पुराने नहाने के कपड़े पहन कर बाहर निकली।

उसका विवाह हाल ही में हुआ। पर पन्द्रह करोड़ की मालकिन इस अभागिनी लड़की के विवाह में उतनी भी धूम-धाम नहीं दिखायी दी, जितना एक गरीब से गरीब लड़की के विवाह में होता है। उस का विवाह घर के भीतर एक बन्द कमरे में हुआ जहां केवल अँगीठी में जलती हुई आग ही उत्सव मना रही थी।

उसके अधिकार में कई बहुत बड़ी जायदादें हैं। चीन, अमेरिका में। एक हवाई द्वीप में। एक फ्रांस के दक्षिण तटवर्ती स्थान में पूर्वी अमेरिका में। उस का पांच हजार एकड़ की जायदाद है, जहां बड़े-बड़े 'लान' और सुन्दर झीलें हैं, फूलों के सुन्दर और विस्तृत बाग है। पर इन सब का कोई उपयोग वह नहीं कर पाती। अपने धन के अत्यधिक भार से वह अपने ही भीतर सिकुड़ी सिमटी सी रहती है।

सिगरट के धुएँ से सम्पत्ति प्राप्त की

डोरिस ड्यूक के पिता ने इतनी बड़ी सम्प[illegible] कैसे इकठ्ठा की यह एक बड़ा ही मनोरञ्जक [illegible] है। यह सारी सम्पत्ति उसने धुएँ की महिम[illegible] एक [illegible] की है। सिगरेट के धुएँ से! [illegible] की भांति

डोरिस ड्यूक का दादा वाशिंगटन ड्यू[illegible] अथोथारिकन गृह-युद्ध में लड़ा था और कुछ समय क[illegible] है। युद्ध बन्दी भी रहा था जब वह जेल से छूटा [illegible] तथा उसके पास सम्पत्ति के नाम पर आधे डालर (उस समय के हिसाब से प्रायः डेढ़ रुपया) के अतिरिक्त अपना कहने को कहीं कुछ भी नहीं था। हां दो आधे अन्धे खच्चर उसके पास अवश्य थे और थे दो मातृहीन लड़के।

गृह-युद्ध के कारण वाशिंगटन ड्यूक के दक्षिण अमेरका स्थित सारे खेत उत्तर अमेरिका के सैनिकों द्वारा रौंद डाले गये थे और कहीं जमीन में खाने की कोई चीज प्राप्त नहीं थी। केवल जमीन के एक टुकड़े पर सैनिकों के चरण नहीं पड़े थे। वह था तमाखू का खेत। वाशिंगटन ने अपने दो बेटों की सहायता से तमाखू की फसल काट कर उसे सुखाया। उसके

बाद सूखी हुई पत्तियों को कूट कर थैलों में भरा, भरे हुए थैलों को छकड़े पर लादा और फिर दो आधे अंधे खच्चरों को छकड़े में जोता। उसके बाद तीनों बाप-बेटे विश्व-विजय को निकल पड़े।

पर सब से बड़ी दिल्लगी यह रही कि उस प्रथम यात्रा के बाद कुछ ऐसा सिलसिला बन्ध चला कि वास्तव में उन तीनों ने तमाखू की दुनिया पर विजय प्राप्त कर ली और संसार व्यापी तमाखू-साम्राज्य स्थापित कर लिया!

अपने छकड़े को वे ऐसे स्थानों में ले गये जहां तमाखू का निपट अभाव था तमाखू बेच कर उन्होंने मांस और आलू प्राप्त किया। रात में एक सड़क के किनारे तम्बू गाड़ कर मांस भून कर और आलू उबाल कर उन्होंने पेट भर खाया और फिर सोचने लगे कि तमाखू की खेती करने की अपेक्षा उसे बेचने में कहीं अधिक सुख है! तब से उन्होंने तमाखू बेचने का व्यापार नियमित रूप से आरम्भ कर दिया। [illegible]से प्रारम्भ में थोड़ा लाभ अवश्य हुआ। पर बाद [illegible]ीव्र प्रतियोगिता का सामना करना पड़ा। [illegible] व्यापार के सैकड़ों बड़े-बड़े फर्म बहुत बड़े [illegible] पाइप के लिये तमाखू तैयार कर रहे थे। [illegible]न ड्यूक के लड़के जेम्स बुकानन (या [illegible] ड्यूक ने (जो संसार की सबसे धनी लड़की [illegible]स ड्यूक का पिता था) सोचा कि यदि उसे जिन्दा रहना है तो तुरन्त कोई नया रास्ता निकालना होगा। आवश्यकता आविष्कार की जननी है। उसने सिगरेट तैयार करके बेचने की बात सोच निकाली।

सिगरेट का आविष्कार

तब अमेरिका में कोई यह जानता भी नहीं था कि सिगरेट किस चिड़िया का नाम है। आज अमेरिका में प्रति वर्ष अरबों-खरबों सिगरेटें फूँकी जाती हैं। पर १८६७ तक कोई इस बात की कल्पना भी नहीं कर सकता था कि कागज में लपेटा हुआ तमाखू एक दिन इस हद तक लोकप्रिय हो उठेगा। 'बक' ड्यूक ने जब पहले पहल सिगरेट का व्यापार आरम्भ किया तब उसे हाथ से सिगरेटें तैयार करनी पड़ती थीं। बाद में उसने एक ऐसी मशीन तैयार कर डाली जिसके फलस्वरूप सिगरेटों का उत्पादन एक दिन में २५०० से बढ़ कर १० लाख तक पहुँच गया। सिगरेट के पैकेट का भी आविष्कार पहले पहल उसी ने किया।

उसके बाद उसका व्यापार तूफान मेल की रफ्तार से आगे बढ़ता चला गया। बीच में जब अमेरिकी कांग्रेस ने सिगरेट पर कर घटा दिया तब उसने सिगरेट के दाम घटा दिये, जिससे उसके प्रतिद्वन्द्वियों को एक दम पराजित होना पड़ा।

वह अपने व्यापार का क्षेत्र बढ़ाता चला गया। जब वह एक नया और बड़ा कारखाना खोलने न्यूयार्क पहुँचा तब उसकी उम्र केवल २७ वर्ष की थी। वह बार-बार यह कहा करता था कि 'जब जान डी० राकफेलर तेल के क्षेत्र में अपने व्यापार को इस हद तक आगे बढ़ा सकता है तब मैं तमाखू के क्षेत्र में क्यों ऐसा नहीं कर सकूँगा?'

धीरे-धीरे यह स्थिति आयी कि उसे अपने व्यापार से प्रायः डेढ़ लाख रुपया प्रति वर्ष की आय होने लगी। यह आय यद्यपि साधारण थी, तथापि जिन परिस्थितियों में वह रह चुका था उन्हें देखते हुए यह बहुत बड़ी रकम थी। इतनी आय होने पर भी वह सस्ते से भोजनालयों में खाना खाता था। जहां गरीब से गरीब आदमी गुजारा करते थे। अपने निजी मामलों में जहां वह इस कदर मितव्ययिता से काम चलाता था वहां अपने एजेन्टों को पूरी सुविधायें प्रदान करके संसार के कोने कोने में भेजता जाता था। अपने कारखाने में काम करने वाले मजदूरों के साथ वह स्वयम् भी सुबह से शाम तक—बल्कि रात तक। उन्हीं की तरह खटता रहता था। छोटे छोटे काम को भी वह बिना अपनी देख भाल आगे नहीं बढ़ने देता था।

जब उसकी मृत्यु हुई तब वह प्रायः ३० करोड़ रुपये की सम्पत्ति छोड़ गया। उसने केवल चौथे या पांचवें दर्जे तक शिक्षा पायी थी। कालेज की पढ़ाई को वह अपने लिये एक दम अनावश्यक समझता

था। वह कहा करता था—'कालेज की पढ़ाई धर्म प्रचारकों और वकीलों के लिये ठीक है, पर मेरे लिये उसकी क्या उपयोगिता हो सकती है? व्यापार के लिये बहुत बड़े मस्तिष्क की आवश्यकता नहीं है।'

सफलता का कारण

उसे व्यापार में इतनी बड़ी सफलता कैसे मिल गयी। जब यह प्रश्न उससे किया गया तब उसने बताया—'मेरी सफलता का कारण यह नहीं है कि मुझ में उन बहुत से व्यक्तियों की अपेक्षा अधिक योग्यता है जिन्हें सफलता नहीं मिली है। मुझे सफलता केवल इसलिए मिली है क्योंकि मैंने कठोर परिश्रम किया है और दूसरे लोगों की अपेक्षा अधिक समय तक मैं अपने काम में डटा रहा हूं। मुझ से बड़ा मस्तिष्क रखने वाले कई व्यक्ति असफल हो चुके हैं। इसका कारण यह है कि वे अध्यवसायी और दृढ़ निश्चयी नहीं थे।'

बक ड्यूक यद्यपि अपने लिये शिक्षा का कोई महत्व नहीं मानता था, तथापि उसने एक विश्व-विद्यालय की स्थापना के लिये प्रायः एक करोड़ रुपया दान दिया। यह विश्वविद्यालय उसी के नाम पर ड्यूक यूनिवर्सिटी के नाम से ख्यात है। उसके संरक्षकों में उसकी लड़की डोरिस ड्यूक भी है।

बक ड्यूक आत्म विज्ञापन से दूर भागता था। उसने अपने जीवन में केवल एक ही बार एक सम्वाददाता को भेंट की अनुमति दी। उस भेंट में सम्वाददाता ने उससे कई प्रश्न पूछे, जिनमें एक प्रश्न यह था:—

'मि० ड्यूक, क्या इतना धन बटोर कर आप सचमुच सुख और सन्तोष का अनुभव करते हैं?

'नहीं तनिक भी नहीं! बक ड्यूक ने उत्तर दिया।

गीत

लेखक, कुँवर सोमेश्वरसिंह बी० ए० एल-एल० बी०

मत इतना मुझे उठाओ

निज क्षणिक सफलता से मैं
इतना मदान्ध हो जाऊँ
हूं गिर सकता फिर से भी
यह नहीं सोच तक पाऊँ
मत इतना मुझे उठाओ।

रह गये किसी कारण जो
हैं मुझ से पीछे पथ पर
उनके प्रति भाव घृणा के
जागृत हो मुझ में कातर
मत इतना मुझे उठाओ।

मेरी उन्नति से दुनिया
इतनी आकुल हो जाये
नित मुझे गिराने की हा
वह अपनी घात लगाये
मत इतना मुझे उठाओ।

सन्तुष्ट हृदय हो ऐसा
आगे पग नहीं बढ़ाऊँ
अपने पन में पागल हो
मैं भूल तुम्हीं को जाऊँ
मत इतना मुझे उठाओ।

एक सुन्दर कहानी

सबसे बड़ी मूर्खता

लेखिका, श्रीमती कमलाकुमारी अग्रवाल

भारत के सुन्दर कश्मीर के वनों में विद्या दान हुआ करता था। भारत के अनेक भागों से अनेक विद्यार्थी विद्या अध्ययन करने के लिये आया करते थे।

एक बार सारी विद्याओं और साधनों में परंगत हो जाने पर एक युवक के मन में यह भावना उत्पन्न हुई कि संसार में सब से बड़ा मूर्ख कार्य क्या है?

इस विचार को युवक ने अपने गुरु के सामने रखा और गुरुदेव ने एक ठीक स्थान पर जाने को कहा।

युवक अपने विद्या भवन को छोड़ कर हिमालय [illegible] वनों में से होता हुआ अमरनाथ के समीप [illegible] पहुंचे तो उसे आश्चर्य हुआ लेकिन अपने [illegible] उपदेश के अनुसार एक सुन्दर भवन में [illegible] पान के अन्दर यौवन से पूर्ण एक युवती [illegible] न। युवती के समीप जाकर युवक ने विनीत [illegible] कहा।

[illegible] मैंने सब विद्याओं का ज्ञान प्राप्त कर लिया है और अपने गुरुदेव शङ्ख की आज्ञा से आपके समीप आया हूं। मेरे मन में यह विचार काफी समय से है कि संसार का सबसे मूर्ख कार्य क्या है?'

युवती ने कहा, 'आपके परम ज्ञानी गुरुदेव ने इस ज्ञान की प्राप्ति के लिये मेरे पास भेजा है, तो निसंदेह आप इसको प्राप्त करेंगे।'

युवक चुप रहा और काफी देर तक युवती को देखता रहा और कुछ देर बाद कालीदास की तरह अपनी अलंकारिक भाषा द्वारा यौवन की व्याख्या करने लगा।

सुन्दरी सत्कार पूर्वक उसे एक सजे कमरे में ले गई। रात्रि के समय अपने विश्राम गृह में चली गई। अपने शयन कक्ष में पहुँच कर जब तरुणी ने दिन भर के वस्त्र भूषण उतार कर विश्राम के लिये ढीले कपड़े पहनने का उपक्रम किया तो ऐसा करने से उसे कठिनता का अनुभव हुआ। अपनी वैसी ही अवस्था में वह रात्रि में सो भी न सकी, इसका कारण वह भी नहीं जानती थी।

प्रातः होने पर वह अतिथि से मिली और अपनी भाषा में उसने रात की कहानी पलों में कह डाली। लेकिन युवक के ऊपर कुछ भी प्रभाव न पड़ा। वह नारी के सामने बातें करने का आदी नहीं था और यही कारण था कि वह जो कुछ कहना चाहता था कह न सका।

युवती ने युवक के हाथ को पकड़ कर दर्पण के सामने ले गई। युवक ने बहुत चेष्टा की कि कुछ बोले लेकिन वह कुछ भी नहीं बोल सका। दपण के सामने युवती ने कहा—'देखो युवक मैं यौवन की प्रतिमा बनी तुम्हारे सामने खड़ी हूं। तुम साधक हो मैं तुम्हारी साधना हूं। तुम जिस चित्र को अपने सामने देख रहे हो मैं उसी की एक कहानी हूं। युवक तुम इस समय कितने सुन्दर प्रतीत हो रहे हो।'

युवक में हल्की सी सिहरन पैदा हुई लेकिन वह अपने को एक युवती के सामने कमजोर दृष्टि से तन देखने के कारण वहीं खड़ा रहा।

अगली रात यौवन की बाला ने विश्राम के ढीले कपड़े पहने और पलंग पर लेट गई। लेकिन उस समय रात अपनी पुरानी कहानी कहने में मग्न थी।

सारी रात उसके होठ कभी मुस्कराते और कभी उस के नेत्र अपनी चंचल दृष्टि इधर-उधर फेंकते।

प्रात: के समय वह अपने उपासक से मिली। युवक के नेत्र कामनी की तरफ इङ्गित थे। उसे उस रूप में एक अद्भुत आनन्द महसूस हो रहा था। युवती भी कुछ देर तक युवक की तरफ देखती रही लेकिन कुछ देर बाद बोली।

'युवक तुम सचमुच मूर्ख हो। यौवन को अपने सामने कांपते देख कर शांत खड़े हो। यौवन नेत्रों में चित्र की तरह छिपने के लिये नहीं बना है। इसे नहीं अपनाना ही संसार में मूर्खता का कार्य होगा। जो मनुष्य नारी से दूर भागने का प्रयत्न करता है वह विश्वामित्र की तरह यौवन के बहुपाश में बंध जाता है। आज तक संसार में पुरुष और नारी का खेल अमर रहा है। जिस भी पुरुष ने अपने को अलग करने का प्रयत्न किया, उसी ने यौवन के हाथों मार खायी है। ंसार के बड़े-बड़े योगी यौवन के दर्शन मात्र से ही अन्धे हो जाते हैं और अपना योग छोड़ कर यौवन के बहुपाश की तरफ भटकते हैं। युवक तुम्हें पता नहीं रात्रि के आलिंगन में मुझे कितना कष्ट अनुभव करना पड़ता है ?

युवक के नेत्र खुले। पहले तो वह झिझका लेकिन जैसे वह युवती की तरफ बढ़ा, युवती ने कहा, 'ठहरो युवक, तुम साहसी प्रतीत होते हो। नारी को समझने का प्रयत्न करो। अभी जो ज्ञान तुमने प्राप्त किया है वह तुम्हारी पुस्तकों में ही है लेकिन जो ज्ञान मैं दूंगी उसे तुम अनुभवों के पृष्ठों में पाओगे।'

कुछ देर युवती युवक को अपने विश्राम गृह में ले गई और दर्पण के सामने खड़ी हो गई। युवक ने देखा कि वह कितना भोला है। चांद उसके सामने चमकता होने पर भी दूर प्रतीत होने लगा। पास शयन गृह में बिछा सुन्दर पलंग था जिस पर वह लेटते ही निद्रा के बहुपाश में बन्ध गया। निद्रा का खेल कब तक रहा लेकिन जिस समय वह उठा उसने देखा कि सारा संसार शांत हो गया है। जब वायु-थपकियों ने उसे उठाया तो वह अकेला था। काफी समय तक युवक बैठा रहा, लेकिन युवती के आने पर वह झिझक सा गया। युवती ने युवक से कहा—'तुम कितने सुन्दर हो, लेकिन एक मूर्ख हो। मेरे नयनों के सागर को देखो वह कितना गहरा है। प्रेम की गंगा इसी में आकर किल्लोलें करती हैं। आओ युवक, जीवन को आनन्द की एक सुन्दर प्रतिमा बनायें।'

युवक पहले तो बढ़ा, लेकिन आगे जाने से रुक गया। युवती को यह सब बुरा लगा। 'तुम वास्तव में मूर्ख हो और आज तुमने वही कार्य किया जिसे तुम जानने आये थे। युवक आओ, मेरी और अपनी प्रेम की यमुना को मेरी गंगा में मिलने दो [illegible] दो।

युवक आगे न बढ़ा और अन्त [illegible] फिर [illegible] कहा—'तुम पत्थर की प्रतिमा हो। जाओ [illegible] एक [illegible] की भांति आश्रम की कुटिया में तिनके गिनो। मू[illegible] अथोथा-संसार में रहने का कोई अधिकार नहीं है। [illegible] है।

युवक के हृदय पर एक ठेस सी लगी, [illegible] तथा वह अपने पथ को जानता था। जिस ज्ञान की चाह में आया था वह उसे मिल गया था। एक रोज वह अन्धेरी रात्रि में अपने गुरुदेव के आश्रम की तरफ चल दिया और माया के जीवन से दूर चला गया।

सावन

भौंरन को गुञ्जन बिहार बन-कुञ्जन में, मंजुल मलारन को गावनो लगत है।
कहै 'पद्माकर' गुमान हूं तें मान हूं तें, प्रान हूं तें प्यारो मनभावनो लगत है॥
मोरन को सोर घन घोर चहुँ ओरन, हिंडोरन को बृन्द छवि-छावनो लगत है।
नेह सरसावन में मेह बरसावन में, सावन में झूलिबो सुहावनो लगत है॥

अमरनाथ का विवाह

लेखिका, श्रीमती वीणा मलहोत्रा

[१]

उन दिनों मैं अपनी नानी के पास जम्मू में रहा करती थी। मेरी आयु उस समय लगभग सात-आठ वर्ष की होगी। कितना अच्छा था वो बचपन। जब मैं अपने मित्र चमन के साथ बाजारों में घूमा करती थी। कितना अच्छा था वह नन्द, जिसकी मिठाई की दुकान से थोड़े से पैसे में ज्यादा सी रबड़ी हम दोनों मजे से खाते थे।

बड़े भाई साहब कैसी अजीब-अजीब बातें सुनाते थे। अमेरिका देश में बड़े-बड़े कानों वाले हब्शी रहते हैं। उन्हें बिछौने की जरूरत नहीं पड़ती तो [illegible] को नीचे बिछा लेते हैं और दूसरे को [illegible]ते हैं। जादू की मजेदार बातें भी करते [illegible]जे के भीतर का पीला हिस्सा सात [illegible]प में सुखाने से उनमें से बड़े-बड़े पठान [illegible]हैं, उन्हें जो भी काम करने को कहो तो [illegible] हैं। मैं और चमन चिलगोजे छील-छील के [illegible] सुखाते थे और उनमें से पठानों के निकलने की राह देखा करते, लेकिन न तो पठान ही निकले और न हमने कभी हार मानी।

उन्हीं दिनों की एक घटना यहां सुनाती हूं। हमारे मकान मालिक एक डोंगरा सेठ थे। उनके पास अमरनाथ नाम का एक साठ वर्ष का बूढ़ा नौकर था। बेचारा दिन भर काम में जुटा रहता था लेकिन सेठ जी उसे सिवाय खाने कपड़े के कुछ न देते थे। बेचारा अमरनाथ अभी तक कुँवारा ही था, लेकिन उसे आशा थी कि उसकी शादी किसी दिन न किसी दिन जरूर होगी। वह हम लोगों से कहता था कि मेरी शादी करवा दो। तो भाई साहब कहते थे कि उसकी शादी तो अब चिता देवी के साथ ही हो सकती है। सारी दुनिया उसका मजाक उड़ाती थी, लेकिन वह निराश नहीं होता था। कभी कभी तो खीझ के कहता सेठ जी आपने तो तीन-तीन शादियां कर रक्खी हैं और मेरी एक भी नहीं करवाते। कभी हम लोग उसे दूल्हे की तरह सजा कर मन्दिर में ले जाते और कहते कि यहां बैठ कर सच्चे दिल से प्रार्थना करो तो भगवान अवश्य ही तुम्हारी मनोकामना पूरी करेंगे। आशा में बँधा बेचारा अमरनाथ अबोध बालकों की तरह आंखें बन्द कर लेता।

[२]

एक दिन नानी के मुँह से उस अबोध बूढ़े अमरनाथ की सगाई की बात सुनी तो दंग रह गयी और साथ ही साथ हँसी भी आयी। दूसरे दिन जब वह हमारे घर के सामने से पीले रंग की पगड़ी और केसर का बड़ा सा टीका लगाये हुए जा रहा था तो देखा। हम सब बच्चों ने उसे घेर लिया और पूछा—

'तुम्हारी सगाई हो गयी।'

'हां, परसों मेरी शादी है।' उसके उत्तर में संतोष की झलक थी और आंखों में खुशी की फुलझरियां छा रही थीं।

इस घटना के तीन दिन पश्चात् मैं और हमारी बूढ़ी दाई बाहर बैठ कर धूप ले रहे थे कि हमारा नौकर गौरी दौड़ता-दौड़ता आया।

'अमरनाथ की बारात देखनी है तो चलो मेरे साथ, वह बोला।' मैं और दाई नंगे पांव ही उसके

पीछे-पीछे दौड़े। बाजार में पहुँचे तो देखा अधिकतर दूकानें बन्द थी। सब अमरनाथ की बारात देखने के लिये चल रहे थे। एक तङ्ग गली में से हमने अमरनाथ की बारात को गुजरते हुए देखा। क्या शान थी! अमरनाथ पीला दुपट्टा बांधे गले में गेंदे के फूलों के हार पहने, स्याही की मूँछें लगाये घोड़े पर जा रहा था। उसके आगे-आगे बाजे वाले जा रहे थे और पीछे-पीछे लोग धक्के पर धक्के लगा रहे थे। मेरी तो इच्छा थी कि मैं बारात के साथ-साथ जाऊँ, लेकिन दाई जबरदस्ती मुझे खींचते-खींचते भीड़ से बाहर ले आई। उन्हें डर था कि कहीं इतनी भीड़ में मैं खो ना जाऊँ। लाचार होकर मुझे उनके साथ घर लौटना पड़ा।

रात को चमन शादी देख कर हमारे घर आया, उसने बताया कि बड़ी अच्छी तरह अमरनाथ की शादी हुई है, वेदी भी बनाई गई थी, पंडित जी को भी बुलाया गया था, लेकिन दुल्हन तो एक छोटे से लड़के को बनाया गया था। जब अमरनाथ घर लौटा तो कितना खुश था! उसके पैर जमीन पर नहीं पड़ते थे। खुशी से दम घुटा जा रहा था। बेचारा बूढ़ा अमरनाथ कभी-कभी आकाश की ओर भी देख लेता था। मानो भगवान को धन्यवाद दे रहा हो।

अच्छा अमरनाथ! तुम्हारी सास कैसी है और सालियां कितनी हैं? मैंने पूछा।

'मेरी सास तो रानी लगती है, मेरी दो सालियां हैं। एक का नाम कमला है और दूसरी का बिमला। एक लाहौर में रहती है और दूसरी काश्मीर में। वह हँसते हुए बोला।'

विवाह के कुछ दिन पश्चात् अमरनाथ हमारे घर बताशे देने आया।

'अमरनाथ! यह बताशे कैसे?'

'मेरी सास ने मुझे बताया कि मेरे घर लड़का हुआ है। उसका नाम मैं राम रखूँगा पर प्यार से रामू कहा करूँगा। पता नहीं नानी उसकी यह बात सुन कर हँसी कि रोई। एक बार अमरनाथ की सास ने बहू को रामलीला दिखलाने के लिये पैसे मांगे तो वह बड़ी मिन्नत करके सेठ जी से आठ आने मांगे और आठ आने नानी से लेकर सास को दे आया था...।'

एक बार सवेरे घूमते-घूमते बेचारा अमरनाथ ससुराल पहुँच गया। जीजा जी को आये देख दोनों सालियां खिलखिला कर बोलीं—'वाह जीजा जी! आप भी खूब आये। आज तो करवा चौथ का व्रत है दिन भर यहीं रहना पड़ेगा और शाम को पूजा के बाद बादाम मिठाई वगैरह लेकर जाना पड़ेगा। शाम को जब अमरनाथ बर्फी लेकर लौटा तो मेरी नानी ने पूछा, 'क्यों अमरनाथ दिन भर कहां गायब थे और इस थाली में क्या है?' अमरनाथ ने सब बातें बता दी। उसकी बातों पर नानी का पोपला मुँह खिल उठा।

अगले दिन सवेरे सुनने में आया कि अमरनाथ बड़ा बेचैन सा हो रहा था। जो बर्फी ससुराल से उसे मिली थी उसमें चूना मिलाया हुआ था दो। उसे खाने पर अमरनाथ का जी घबरा[illegible] लोगों ने उससे कहा कि पुलीस में [illegible] एक ऐसा भी क्या मजाक हुआ? लेकिन [illegible] की भांति कहा—'मेरी सालियों ने लाड़ से मेरे सा[illegible] अथोथा-है तो मैं उनकी पुलीस में रिपोर्ट दूं?' [illegible] है। नहीं कर सकता। [illegible] तथा

असली राज तो बाद में मालूम पड़ा कि एक नाई की यह सब कारास्तानी थी, जिसने शादी के लिये अधीर बूढ़े अमरनाथ का अच्छा मजाक बनाया था।

कई वर्ष व्यतीत हो गये हैं। बचपन भी बीत गया। मुझमें शरम और लज्जा भरने लगी।

वर्षों बाद इन छुट्टियों में जब मैं जम्मू आयी तो बचपन की पुरानी स्मृतियां फिर से मेरे सामने बिखर गयीं। चित्र सजीव हो उठे...चमन और मैं... बूढ़ा अमरनाथ...उसकी शादी का मजाक...उसकी सालियों की छेड़ छाड़...।

ठेलों पर अजगर

लेखक, श्री स्वामी भिक्षानन्द

जब से कांग्रेसी शासन कायम हुआ है तब से देश में मानों सतयुग ही आ गया है और अब ऐसी-ऐसी घटनाएँ घटित हो रही हैं, जो सतयुग में होती थीं। शिव पार्वती कैलाश के उच्च शिखर से मैदान में उतर आये हैं और साधारण मनुष्यों का वेष बनाये गांव-गांव, गली-गली, शहर-शहर नित नूतन दृश्य देखते घूम रहे हैं।

एक दिन वे क्या देखते हैं कि एक के पीछे एक दस बारह ठेले चले जा रहे हैं और उन पर एक विशाल काय विकराल अजगर लेटा है। अनेक कुली और मजदूर उन ठेलों को शहर की एक तंग गली से रहते हैं। उन्हे हैं। रास्ता रुका पड़ा है।

को नी... ने पूछा हे नाथ—'यह शेषनाग के ...ते हैं ...मान कौन प्राणी इस पृथ्वी पर आ ... हुए

...देव जी बोले—'भारत में तुम्हें ऐसे अनेक जि... ...ब दिखाई पड़ेंगे। कहां तक तुम पूछोगी और कहाँ तक मैं बताऊँगा?'

परन्तु पार्वती जी न मानीं। पूछती ही रहीं। तब महादेव जी बोले—'हे देवि! यह अजगर नहीं, भ्रष्टाचारी है। मुफ्त का माल खा-खा कर मोटा हो गया है। इसी से ठेलों पर लदा फँदा चल रहा है।'

परन्तु पार्वती जी बोलीं—'यह भ्रष्टाचारी तो नई जाति सुन रही हूं। कल सृष्टि के रचयिता ब्रह्मा से भेंट हुई थी। उन्होंने भी नहीं बताया कि उन्होंने एक नये जीव की वृद्धि की है।

तभी वे क्या देखते हैं कि लोग पूड़ी पकवान मेंढक, मच्छी, तीतर, बटेर, मांस, मदिरा, मल, मूत्र ला लाकर उस अजगर के मुँह में डाल रहे हैं।

पार्वती जी बोलीं—'देव! यह क्या? इसे किसी वस्तु से घृणा नहीं।'

'यह सब हजम कर लेता है।' महादेव जी बोले।

कुछ दूर और चलने पर वे क्या देखते हैं कि एक मकान में आग लगी हुई है और आस पास की चीजें उड़ उड़ कर उसी में गिर रही हैं और भस्म हो रही हैं।

पार्वती जी को जान पड़ा वे भी उसी ओर खिंच रही हैं। वे महादेव जी को जोर से थाम कर रुकीं और बोलीं—'देव यह क्या है?'

'यह इस भ्रष्टाचारी का निवास है।'

'यह जल क्यों रहा है?'

'तुम्हें ऐसा प्रतीत हो रहा है। पर यह वह पवित्र अग्नि नहीं जिसमें तुम अपना भोजन पकाती हो। यह इस अजगर की तृष्णा की अग्नि है। इसी में यह क्रमशः इस देश को भस्म कर डालेगा।'

'देव यह तो बड़ा अनर्थ होगा। इस अजगर को मारने का कोई उपाय नहीं?' पार्वती जी बोलीं।

'है क्यों नहीं।'

'तो देवों के देव वह उपाय शीघ्र बताइये।'

महादेव जी बोले—'इसके लिये समाधिस्त हो कर सोचना पड़ेगा।'

तो चलो वापस कैलाश पर। इस अजगर से मानवों का त्राण कर तब आगे बढ़ेंगे और वे कैलाश वापस चले गये।

विश्वासघात

लेखिका, कुमारी चन्द्रलता 'रिक्ख'

आज प्रीतिमा का ब्याह है। द्वार पर शहनाई बज रही है। जिस समय प्रीतिमा को सजा कर अजय कुमार के बराबर मँडप पर लाकर बैठाया गया, अजय को लगा मानो इन्द्रलोक की कोई अप्सरा उसका अभिवादन करने पृथ्वी पर उतर आई हो। अजय को आज प्रथम बार अपने भाग्य पर गर्व होने लगा।

जब अजय कुमार प्रीतिमा को ब्याह कर लाये, स्त्रियों का जमघट लग गया। जो भी प्रीतिमा की मोहिनी सूरत को देखती, देखती ही रह जाती। मानो यह विश्वास ही नहीं हो रहा हो कि यह स्त्री है या देवी। उसके भोले मुख मण्डल पर लज्जा की लालिमा फैली हुई थी। पतले-पतले लाल अधरों पर नन्हीं सी मुस्कान की रेखा व्यक्त थी।

प्रीतिमा ने अपने मधुर व्योहार से ससुराल के प्रत्येक छोटे-बड़े प्राणी के मन पर अपना आधिपत्य जमा लिया था। विशेष कर अजय तो अपने को प्रीतिमा का दास समझने लगा था। चारों ओर सुख की वर्षा हो रही थी। उनका छोटा सा घर—घर नहीं, स्वर्ग था। जिस समय अजय घर में आता, प्रीतिमा अधरों पर मीठी मुस्कान लिये उसका स्वागत करती। यह उसका नित्य का नियम था। अजय को समस्त चिन्ताओं, दुख तथा थकान को प्रीतिमा की एक ही मुस्कान क्षण भर में ही मिटा देती थी। सुख का सागर बह रहा था। वह घर ऐसा था जिसमें सुख ही सुख था—दुख की छाया तक उससे दूर भागती थी। दुखी प्राणी भी उस शान्त वातावरण में आकर सुख का अनुभव करते थे। किन्तु विधाता से कब किसी का सुख देखा जाता है—अचानक उस घर पर भी दुख के बादल मँडराने लगे।

एक दिन अजय जब नित्य की भांति घर में आया तो उसके साथ एक और सुन्दर युवक भी था, प्रीतिमा अजय की प्रतीक्षा में सदा की भांति खड़ी थी। पति के साथ किसी अनजान पुरुष को आते देख कर वह पीछे हट गई, पर तभी अजय का परिचित स्वर उसे सुनाई दिया, 'प्रीति' इधर आओ। यह तो मेरा अभिन्न मित्र विजय है।

मित्र ही नहीं, मैं सदा से इसे अपने छोटे भाई के समान मानता आया हूं, फिर इससे क्या परदा ? प्रीतिमा अभी पूरी तरह सम्भलने भी न पाई थी कि विजय ने आगे बढ़ कर हाथ जोड़ते हुए कहा—'भाभी दास का प्रणाम स्वीकार हो। प्रीतिमा ने लजाते हुए कठिनाई से उत्तर दिया, नमस्ते, त्रिगा'दा। बाबू।' विजय ने उस अनुपम सौन्दर्य को फिर [illegible] ठंडा सा रह गया। उसे अपने प्रिय मि[illegible] एक भाग्य पर न जाने क्यों ईर्ष्या सी होने ल[illegible] की भांति

उस दिन से नित्य प्रति विजय अजय [illegible] अथोथा-आने लगा। अजय के विवाह से पहले वह [illegible] ी है। चला गया था और अब बहुत दिनों के बाद वा[illegible] तथा आया था। विजय के हृदय में प्रीतिमा की सुन्द[illegible] मूर्ति जो एक बार स्थापित हो गई थी वह लाख प्रयत्न करने पर भी धुँधली न पड़ती थी। जितना भी विजय प्रीतिमा से दूर रहने का प्रयत्न करता, उतनी ही अधिक प्रीतिमा की याद उसे सताती थी। उसने उस प्रेम की आग को मन में बहुत दिनों तक छिपाये रक्खा, पर एक दिन वह भयंकर ज्वाला और भी तेज भड़क उठी। विजय ने पक्का निश्चय कर लिया कि किसी भी तरह प्रीतिमा का प्रेम अवश्य प्राप्त करूँगा। कहां तक इस आग को मन में दबाये रखूँ। किन्तु उसे प्रीतिमा के सामने प्रेम-प्रदर्शन

करने का कभी साहस ही नहीं होता था और न उसे प्रीतिमा की ओर से ऐसा अवसर मिलने की कभी आशा ही थी। फिर भी उसने साहस न छोड़ा। आग ही ऐसी लगी थी कि वह उसे बुझा भी नहीं सकता था।

एक दिन विजय प्रतिमा के पास ऐसे समय में पहुँचा, जब वहां अजय नहीं था। प्रीतिमा विजय के असमय आने पर कुछ चौंकी, क्योंकि वह पहले कभी इस तरह न आया था। उसने साहस करके कहा—'आइये विजय बाबू, आज कैसे इस समय इधर निकल आये ?'

'भाभी मेरा आना भी क्या आपको बुरा प्रतीत होता है, विजय ने बैठते हुए उत्तर दिया।

'नहीं विजय बाबू यह बात तो नहीं। यूँ ही, आप कभी इस समय इधर आते नहीं थे ना; इसलिये पूछ लिया था। प्रीतिमा ने बात बदल कर कहा।'

'भाभी तुम इतनी सुन्दर क्यों हो ! आखिर, जो भी तुम्हें देखता है उसके हृदय में सदा के लिये [illegible] यह मन मोहनी मूर्ति स्थापित हो जाती है। [illegible] इस अनोखे वाक्य को सुन कर प्रीतिमा [illegible]ठी।'

[illegible] इसका मतलब विजय बाबू ? क्रोध के आवेग [र]ोक कर प्रीतिमा ने उत्तर दिया।'

'मतलब, इतनी अबोध तो नहीं हो तुम भाभी।' विजय ने दूसरा तीर छोड़ा।

'देखिये विजय बाबू मुझे इस प्रकार की मजाक अच्छी नहीं लगती, उठती हुई प्रीतिमा बोली।' उस का चेहरा क्रोध से तमतमा रहा था।

लपक कर विजय दरवाजे पर जा खड़ा हुआ और प्रीतिमा का हाथ पकड़ कर बोला—'नाराज क्यों होती हैं आप ! क्या मुझे आप से मजाक करने का भी अधिकार नहीं ?'

प्रीतिमा से विजय की धृष्टता सहन न हो सकी, उसने झटके से अपना हाथ छुड़ा लिया और विजय के मुँह पर चटाक से एक चपत दे मारा। क्रोध ने उसे बड़ा अदम्य बना दिया था।

'तुम्हें मुझसे इस तरह की मजाक करने का तनिक भी अधिकार नहीं है।' कहती हुई वह कमरे से बाहर हो गयी।

विजय कुछ देर खड़ा सोचता रहा। फिर स्थिति का आभास करके वह बड़ा दुखी हुआ। यह मैंने क्या किया, अब क्या होगा ? मैंने तो स्वयम् अपने पैरों पर कुल्हाड़ी मार ली। यह सब सोचता हुआ वह चुपचाप वहां से चल पड़ा और सीधा अजय के आफिस में जा धमका। आज बुरे से बुरा काम भी करने को विजय तैयार हो चुका था। उसने सारी कथा कुछ उलट-पलट कर रोनी शक्ल बना कर अजय को सुना डाली—

'क्या अजय मैं इतना नीच हूं, जो तुम्हारी स्त्री पर बुरी नजर डालूँ। मैंने आज तक तुम्हें अपना बड़ा भाई समझा और समझता रहूंगा, किन्तु भाभी ने मुझे अवारा समझ कर मेरी ऐसी बेइज्जती की तो अब मैं तुम से क्षमा चाहता हूं। भविष्य में कभी भूल कर भी तुम्हारे घर न जाऊँगा। भाभी को मैं अपनी बहिन के समान ही समझता रहा हूं, केवल भाभी के नाते कभी-कभी उन्हें छेड़ने को मन चाहता है। खैर भाई मुझे क्षमा करो और वह फूट-फूट कर रोने लगा।'

'छिः विजय बच्चों की सी बातें करते हो भाई, तुम्हें क्या मुझ पर विश्वास नहीं ? तुम्हारे लिये मैं क्या नहीं कर सकता। प्रिय, तुम मेरे प्यारे भाई हो। मैं अभी जाकर प्रीतिमा को इस बेवकूफी की अच्छी सजा देता हूं, तुम्हारी खुशी ही मेरी खुशी है। तुम्हें दुःख हुआ तो क्या मुझे नहीं हुआ ? सच विजय मुझे प्रीतिमा की इस धृष्टता पर बड़ा क्रोध आ रहा है, उसकी ओर से मैं तुम से क्षमा मांगता हूं। तीर निशाने पर बैठा था, विजय ने जरा बात बदल कर कहा—'मुझे आप से कोई शिकायत नहीं भाई साहब, आप मुझे लज्जित न करें। भाभी का भी मैं कुछ दोष नहीं समझता। वह मेरे स्वभाव से परिचित ही कहां होगी भला ? आज ऐसी दशा में मुझ पर सन्देह करना कोई आश्चर्य की बात नहीं।

राजस्थान का हृदय—लेखिका, रानी लक्ष्मीकुमारी चूड़ावत, प्रकाशक, श्री साधना प्रेस लि० जयपुर, मूल्य ३)

रानी लक्ष्मीकुमारी हिन्दी की सुलेखिका हैं। राजस्थानी साहित्य का भी उनका ज्ञान और अध्ययन अथाह है। अतएव इस पुस्तक में राजस्थानी साहित्य के अत्यन्त काव्य रस भरे और उच्चादर्श पूर्ण दोहे चुन कर एकत्र करने और सरल तथा संक्षिप्त हिन्दी में उनका अर्थ लिख देने में पूर्ण सफल हुई हैं। पाठकों के आनन्द के लिये यहां हम कुछ दोहे उद्धृत करते हैं:—

पंथी एक संदेसड़ा, बावल नै कहियाह।
जायां थाल न वजिया, टामक टहटहियाह॥

हे पथिक, एक संदेश मेरे पिता को कह देना, 'मेरे जन्म के समय अशुभ समझ कर आपने थाली भी नहीं बजाई थी पर आज मेरे सती होने के समय संसार ढोल बजा बजा कर मेरा सम्मान कर रहा है।'

सुत मरियो हित देश रै, हरख्यो बन्धु समाज।
मां नंह हरखी जनम दे, जतरी हरखी आज॥

देश के लिये पुत्र ने प्राण दे दिये हैं, यह देख कर बान्धव गण हर्षित हो उठे हैं। उस वीर की माता को जितनी प्रसन्नता आज उसके वीरगति प्राप्त करने पर हुई है उतनी जन्म के समय भी नहीं हुई थी।

पीहर पूछै खोलणी, पेई भूखण केर।
हेरवियां भाभी हंसी, नणद कनै नालेर॥

पीहर में ननद के आभूषणों की मञ्जूषा खोल कर देखने पर उसमें सती होने का नारियल देख कर भाभी हँसने लगी।

इसी प्रकार सभी दोहे हैं। इन्हें पढ़ने के बाद श्री जयनारायण व्यास ने ठीक ही लिखा है—'शृङ्गार को शुद्ध ही नहीं उच्च भी बनाने का जो प्रयास राजस्थानी में पाया जाता है, वैसा प्रयास किसी और भाषा में शायद ही हो।'

पुस्तक आदि से अन्त तक आर्ट पेपर में छपी सजिल्द और संग्रहणीय है।

— श्रीनाथसिंह

पुरुष-स्त्री—लेखक, श्री रघुवीर शरण दिवाकर, प्रकाशक, मानव साहित्य सदन, मुरादाबाद, पृ० सं० १६६, मूल्य २॥)

'विवाह संस्था', 'दाम्पत्य', 'तलाक' 'आदर्श-परिवार', 'सतीत निरोध' आदि विषयों को लेकर विभिन्न क्षेत्रों में स्त्रियों और पुरुषों के पारस्परिक सम्बन्धों की गम्भीर विवेचना कर निबन्ध्याकार ने क्रान्तिवादी और प्रगतिवादी दृष्टिकोण पाठकों के सम्मुख रखा है। विषयों के ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के विश्लेषणात्मक परिचय के साथ नवीनत[illegible] पानी लगा दो। धारा का मिश्रण पुस्तक की उपादेयता ब[illegible]। फिर

दिवाकर जी ने स्त्री और पुरुष [illegible] एक दूसरे का पूरक बनाया है। स्त्री भी पुरुष की भांति स्वतन्त्र है, किन्तु फिर भी दोनों का जीवन अन्योन्याश्रित है। इसी की पुष्टि संकलित निबन्धों में की है। प्रायः सभी लेख गवेषणात्मक, व्याख्या पूर्ण तथा मौलिक हैं। शैली का प्रवाह निबन्धों को और भी दिलचस्प बना देता है। मुख पृष्ठ कलात्मक हैं और पुस्तक का 'गेट अप' आकर्षक है।

—आत्माराम नागर एम० ए०

देश-भक्त नर्तकी—लेखक, सैयद कासिम अली, साहित्यालंकार, प्रकाशक—सुषमा साहित्य मन्दिर जवाहरगंज, जबलपुर, पृ० सं०—१७६, मूल्य २)

राष्ट्र-हित के लिये प्राणों का उत्सर्ग करने वाली हूर नामक नर्तकी किस प्रकार से भारत पर आक्रमण करने वाले क्रूर नादिरशाह का अन्त करती है। उस

का कुतूहल पूर्ण एवम् मनोवैज्ञानिक चित्र प्रस्तुत ऐतिहासिक नाटक में मिलता है। समस्त नाटक देश-प्रेम की उच्चभावना से ओत-प्रोत है। देश-प्रेम का ज्वार धार्मिक तथा साम्प्रदायिकता के बांधों से नहीं रोका जा सकता। इसी ध्येय से नाट्याकार ने इस पुस्तक की रचना की है। युग-विशेष से सम्बन्धित वातावरण, भाव, भाषा आदि का सफल सृजन हुआ है। खोजपूर्ण ऐतिहासिक सामग्री और मौलिक कल्पना का सामन्जस्य नाटक को हृदयग्राही बना देता है। श्री जयचन्द विद्यालंकार द्वारा लिखित भूमिका ने ऐतिहासिक तत्वों पर प्रकाश डाल कर पुस्तक के महत्व को बढ़ा दिया है।

—आत्माराम नागर, एम० ए०

बापू ने कहा था—लेखक, श्री श्रीवास्तव 'हिमांशु' प्रकाशक—बिहार प्रकाशन समिति, पटना, पृ० सं०—५१, मूल्य ।।)

रहते हैं । को

...पुस्तिका सात शिक्षाप्रद, सरल और मनोरंजक कहानियों एवम् शब्द चित्रों का उपयोगी संग्रह है। 'बापू ने कहा था', 'शहीद अर्जुनसिंह', 'दो छात्र' आदि कहानियां उल्लेखनीय हैं। 'बापू ने कहा था' नामक कहानी राष्ट्र पिता बापू की अमर आशा, दृढ़ विश्वास तथा आत्मबल की परिचायिका है। अन्य कहानियों में मित्रता का आदर्श, भारतीय मां की हृदय की विशालता; शहीद अर्जुनसिंह की वीरता, धैर्य आदि की चर्चा हुई है। 'पपीहरा', 'खलीफा दादा' के शब्द चित्र काफी रोचक हैं। यत्र-तत्र बिखरे हुए सम्वाद स्वाभाविक और सरल हैं। भाषा भी प्रमोदमयी है।

छोटे बच्चों के लिये पुस्तिका हितकर सिद्ध होगी। मुख पृष्ठ सादा होते हुए भी आकर्षक है। हां! प्रसंगानुकूल चित्रों का अभाव खटकता है।

—आत्माराम नागर, एम० ए०
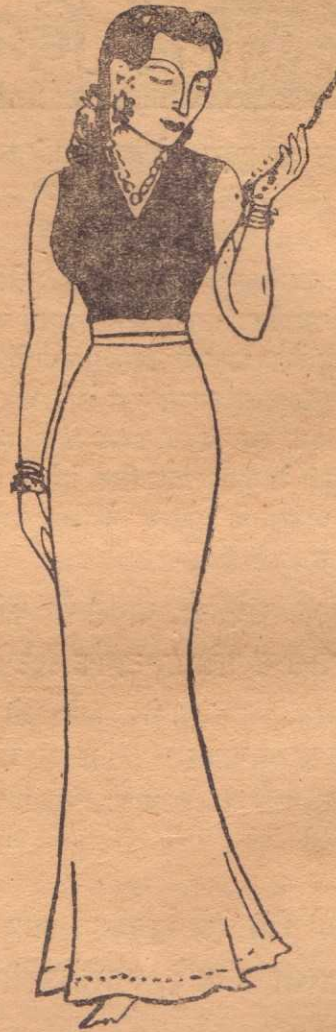
पेटीकोट

साड़ी का 'अप-टू-डेट' पहनावा पेटीकोट पर निर्भर है। पेटीकोट इस तरह होना चाहिए कि कमर पर बिलकुल चुन्नट न पड़े। इसके लिये सिलाई के समय ही ध्यान देना चाहिये। इसके लिये 'एलैस्टिक' या बटन का प्रयोग कर सकती हैं, इजारबन्द नहीं होना चाहिए। पेटीकोट बिलकुल पैर की उँगलियों तक आना चाहिए। ऐसे पेटीकोट के ऊपर कमर पर बिना चुन्नट डाले पहनी गई साड़ी बहुत खिलेगी।

कुम्हड़ा की मीठी पकौड़ी

सामान—अच्छा मीठा तथा लाल रंग का खूब पका हुआ कुम्हड़ा (काशीफल), घी, मेवा, इलायची, आटा तथा शक्कर।

विधि—कुम्हड़ा छील कर तरास लें और उसे घी में छौंक दें। जब वह खूब गल जाये और गतरे एक भी न रहें तो उतार लें। अब हाथ से अच्छी तरह मसल डालें। पीछे उसमें मेवा, इलायची तथा एक सेर कुम्हड़े में आधी छटांक आटा और जितना मीठा बनाना चाहती हों, उसी हिसाब से शक्कर डाल दें। इसके बाद कड़ाही में गरम होते हुए घी में पकौड़ी छोड़ती जायें और लाल होने पर निकाललें। यह पकौड़ी खाने में बहुतस्वादिष्ट होती हैं।

—श्रीमती सरलादेवी, कुशवाहा

लौकी की खीर

एक सेर दूध को कड़ाही में चढ़ा दो, फिर लौकी को अच्छी तरह छील डालो और कद्दूकस में कसने के बाद लौकी को खौलते हुए दूध में डाल दीजिये। थोड़ी-थोड़ी देर बाद चलाते रहिये और जब लौकी दूध में मिल जाये और बस खीर बन गई तो उसमें शक्कर और इलायची डाल कर उतार लीजिये। इसी तरह काशीफल की खीर भी बनाई जा सकती है।

—बिमलादेवी चतुर्वेदी, जहांगीरपुर

चिरौंजी की पूड़ी

सामान—गेहूं का आटा तीन पाव, चिरौंजी एक सेर, शक्कर तीन पाव, इलायची एक तोला, घी, पानी, दूध।

विधि—विधि गेहूं का आटा दूध वा पानी में सान ले और चिरौंजी को पीस लो। शक्कर को बारीक पीस लो। चिरौंजी, शक्कर और इलायची पिसी हुई इन तीनों चीजों को एक में मिला लो। फिर आटे की टिकिया बना कर पीसी हुई चिरौंजी का मसाला उसमें भर कर गरम घी में तल लो।

—कलावतीदेवी जायसवाल, पचमढ़ी

मेवा और मैदे की लुकमी

सामान—चिरौंजी, बादाम, किशमिश, गरी, पिस्ता, छोटी इलायची, स्याह जीरा, दारचीनी, लौंग नमक, लाल मिर्च, नींबू का रस, थोड़ी सी शक्कर, मैदा पाव भर।

विधि—बादाम भून कर उसके साथ शक्कर पीस लो, किसमिश आधी पिसी, आधी समूची और बाकी मसाले घी में भून कर अधकुटा करके मिला लो। फिर मैदे में घी मिला कर (खूब अच्छा मोयन देकर) सान लो। एक छोटी पतली पूड़ी बेल कर उसी के बराबर दूसरी और पूड़ी बना लो। फिर एक पूड़ी पर कचौड़ी के समान मिला हुआ (मिश्रण) रख कर उस पर मैदे को घोल कर किनारे-किनारे पानी लगा दो। फिर दूसरी पूड़ी उसी में चपका दो। फिर [illegible] काट कर रख लो। जब सब तैयार हो [illegible] घी की कड़ाही में उन्हें पूड़ी की तरह त[illegible] यह लुकमी खाने में बड़ी ही स्वादिष्ट होती है।

—कामिनीदेवी 'विदुषी', उन्नाव

कलमी बड़े

चने की दाल को भिगो दीजिये और फूल जाने पर पीस लीजिये। जब उसकी पिट्ठी बन जाय तो धनिया, सौंफ, गरम मसाला अन्दाज से मोटा-मोटा और नमक, मिर्च बारीक पीस कर डाल दीजिये। अब पिट्ठी को हाथ से मोटी रोटी की तरह बना कर तवे पर थोड़ा सा तेल डाल कर अधपका सा सेंक लीजिये। ठंडा हो जाने पर चाकू से पतले-पतले टुकड़े कतर लीजिये। फिर कड़ाही में काम लायक तेल डाल कर मंदी आंच में खस्ता सेंक लीजिये। यह खाने में बहुत स्वादिष्ट होता है।

—सुश्री अज्ञात

जासूसी कहानी

प्रतिहिंसा

लेखक, श्री निशीथकुमार राय, बी० ए०, एल-एल० बी०

हिन्दी में जासूसी कहानियां लिखने में श्री निशीथकुमार राय बी० ए० एल-एल० बी० बेजोड़ हैं। 'दीदी' में इनकी कहानियां इस वर्ष जनवरी से बराबर छप रही हैं। जिन्होंने अभी तक न पढ़ा हो, वे यह कहानी अवश्य पढ़ें।

[१]

दिसम्बर की ४ तारीख थी।

उदय वास्तव में आश्चर्यान्वित था, डा० प्यारे... की भी कोई हत्या कर सकता है? यह उसके स्वप्न के भी बाहर की बात थी। डा० प्यारेलाल जिले के सब से बड़े डाक्टर थे। लाखों रुपये महीने में कमा कर रख लेते थे। उनके कोई लड़का बच्चा न था। अपनी कुल कमाई वे गरीब दुखियों के लिये व्यय कर देते थे। उनके रुपये से कितने ही अस्पताल चालू थे। सबेरे अपने बहुमूल्य समय में से तीन घंटा वे गरीबों के मुफ्त इलाज करने में व्यतीत करते थे। रहते थे बड़े सीधे सादे तौर पर। एक घुटने तक की खद्दर की धोती व एक मोटा कुरता जाड़े में, उसी पर एक गरम धुस्सा ओढ़ लेते थे। मरीजों की सहूलियत के लिये उन्होंने एक मोटर रखी थी, जो आये दिन ऐम्बुलेन्स के काम लाई जाती थी। शहर के प्रत्येक व्यक्ति के हृदय में उनकी ओर गम्भीर श्रद्धा थी। उनके हत्या के सम्वाद से सब लोग स्तम्भित रह गये। सम्वाद पत्र वालों ने पुलीस की कटु आलोचना की। मगर मुल्जिम का कोई पता नहीं लगा। सबसे मजे की बात यह थी कि हत्यारा मृतक के सिर पर उसी के खून से 'नं० १' का शब्द लिख गया था...।

[२]

उदय अपनी किसी तफतीस में तल्लीन था। इतने में टेलीफोन की घंटी झनझना उठी, तार के उस पार से एस० पी० श्री हरपालसिंह की आवाज सुनाई पड़ी—'भाई उदय क्या तुम थोड़ी देर के अन्दर मुझ से मिल सकते हो।'

'खुशी से' कह कर उदय ने टेलीफोन रख दिया और दस मिनट के अन्दर पुलिस कप्तान श्री हरपाल सिंह के पास जा पहुँचा। हरपालसिंह ने अपने गोल कमरे में उदय को आदर सहित बिठाला और फिर बोले—'भाई उदय मैं एक मामले में तुम्हारी मदद चाहता हूँ।' उदय और हरपालसिंह कालिज में साथ पढ़े हुए थे।

'कहो क्या काम है।'

'तुमने अभी सुना न होगा कि शहर के प्रमुख डा०

कृष्णमुरारी की किसी ने हत्या कर डाली है और हत्याकारी उनके माथे पर खून से 'नं० २' लिख गया है।'

उदय चकित हो उठा। हरपालसिंह ने देखा और बोले—'हां, मेरा भी ख्याल यही है, जैसा कि तुम सोच रहे हो। प्यारेलाल और कृष्णमुरारी का हत्याकारी एक ही आदमी है या आदमियों का गिरोह है।'

'ताज्जुब की बात तो यह है कि डा० प्यारेलाल पिछले महीने की चार तारीख को मार डाले गये थे।' उदय की बातें सुन कर हरपालसिंह भी चिन्तित हुए और बोले—'ऐसा प्रतीत होता है कि इन हत्याओं के पीछे कोई बात है। यह कुल हत्याएँ किसी प्लैन के अनुसार की जा रही है।'

'क्या आपने दोनों मृतकों का कोई सम्बन्ध ज्ञात किया।'

'नहीं, और चिन्ता की बात तो यह है कि डा० प्यारेलाल की अच्छी तरह जान पहिचान भी न थी। डा० कृष्णमुरारी बच्चों के इलाज में माहिर हैं और पञ्जाब के शरणार्थी थे और सिर्फ छः माह हुए इस शहर में आकर डाक्टरी शुरू की।'

'क्या तुमने मुर्दे को देखा है ?'

'नहीं। मैं तुम्हारे इन्तजार में था। आओ चलो।'

मोटर में दोनों की बात चीत हो रही थी।

उदय—'मुझे तो ऐसा लगता है कि कोई छोटा-मोटा डाक्टर अपनी डाक्टरी चलाने के लिये ऐसी हरकतें न कहीं कर रहा हो।'

हर०—'अगर ऐसी बात थी तो माथे पर नम्बर क्यों डालेगा और इतना देर करके क्यों एक-एक कत्ल करेगा और फिर ऐसे चोटी के डाक्टरों को मारने से उसको लाभ ? इनके मरीज किसी बराबरी के डाक्टर के पास जायेंगे। छोटे डाक्टर के पास नहीं और कोई अक्लमन्द डाक्टर रोजी कमाने के लिये खुद फांसी के तख्ते पर चढ़ने की जिम्मेदारी नहीं लेगा।' बातें करते हुए वे दोनों घटना-स्थल पर पहुँचे। वहां लाश पड़ी थी, चार सिपाही और खुद शहर कोतवाल वहां मौजूद थे। कप्तान साहब के हुक्म से मृतदेह के आठ दस कदम के अन्दर किसी को जाने नहीं दिया गया था। मृतदेह को भी ज्यों का त्यों पड़ा रहने दिया गया। गौर से मृतक को देख कर कई बातें उदय को मालूम हुई। नं० १ मृतक को बहुत करीब से चाकू मारा गया था। नं० २ को ऐसी जगह चाकू मारा गया था कि दिल (फेफड़े) को भेद करके चाकू का फल घुस गया था।

चाकू के दस्ते पर रूमाल लपेट कर उदय ने मृतक के शरीर से निकाल लिया और हरपालसिंह जी की ओर बढ़ा कर बोला—'कप्तान साहब आप कृपया अपने ब्यूरो से इस पर अंकित निशान अंगूठा का फोटू लिवा कर यदि मुझे भेज दें तो अति कृपा होगी।'

'जरूर।' कह कर हरपालसिंह ने छुरी को यत्न पूर्वक रख लिया। उदय ने अपनी कैमरा द्वारा मृतक के माथे पर लिखा हुआ दो की संख्या क[illegible] उतार लिया।

[३]

उदय अपने कमरे में बैठा बार-बार उस रूमाल को सूँघ रहा था जिसके सहारे उसने चाकू को मृतक के शरीर से निकाला था। उसका मुख गम्भीर हो उठा। मानसिंह की ओर रूमाल बढ़ाते हुए बोला, 'देखो मान, मुझे तो इस रूमाल में एमोनिया की बू मिल रही है। मुमकिन है मेरा ख्याल गलत हो, जरा तुम देखो तो।'

मानसिंह ने रूमाल सूँघा और सर हिला कर बोला, 'तुम्हारा ख्याल बिलकुल सही है। इस रूमाल में एमोनिया की बू मुझे भी मिल रही है।'

'इससे यह मालूम होता है कि उस चाकू के बेट पर से ही यह बू रूमाल में आयी है। मेरा सिद्धान्त है कि हत्यारा या तो कोई डाक्टर या कम्पाउन्डर और नहीं तो कोई ऐसा आदमी है जो रासायनिक द्रव्यों का छूता रहता है, जैसे रसायन

शास्त्र का अध्यापक या छात्र।' थोड़ी देर रुक कर उदय बोला, 'चाकू को देखना बहुत जरूरी है, मान तुम टेलीफोन के जरिये कप्तान साहब से उस चाकू को भेज देने को कहो।' आधे घंटे के अन्दर दारोगा रिपुदमनसिंह आ पहुँचे। जरा मुँह लटकाये हुए वे कमरे के अन्दर घुसे और बोले—'हुजूर मैं चाकू ले आया हूं। मगर कातिल का पता मैंने लगा लिया है। आप जिस लाइन पर तफतीस करने वाले हैं मैंने बहुत पहिले ही उस लाइन पर तफतीस करके बड़ी कामयाबी हासिल की है।'

'अगर आपत्ति न हो तो हम लोगों को भी कुछ बताइये।' बोला मानसिंह।

'इस चाकू को देकर कप्तान साहब बहादुर ने मुझे इस मामले की तफतीस करने को कहा है। चाकू को पाते ही सरकार मैंने दिमाग दौड़ाया और दीगर तफतीस कुनिन्दा की तरह शुरू से ही नाउम्मीद न होकर मैंने इस चाकू के कोने पर इसके बनाने वाले [illegible]म पढ़ा। इत्तिफाक से बनाने वाला चौक का [illegible]सर दुकानदार है, मैं तुरन्त उसके पास जा पहु[illegible]र यह मालूम किया कि हाथी दांत के दस्ते वाले कितने चाकू हाल में उसने बेचा है। उसने कहा चार। चार में से तीन का तो नाम उसने बताया। उदय का चेहरा खुशी से झलमला रहा था वह बोल उठा बहुत अच्छा काम किया है तुमने ?'

'दुकानदार ने बताया कि एक चाकू प्रोफेसर अब्दुलहक, एक डाक्टर लछमन प्रसाद और एक ज्वालासिंह ने खरीदा है। चौथे का नाम उसे याद नहीं, क्योंकि यह तीनों उसके मुस्तकिल ग्राहक थे और बिल के जरिये वह रुपया इनसे वसूला करता था। मैंने पूछताछ की तो मालूम हुआ कि ज्वालासिंह से मृतक की लड़ाई किसी मकान के चोर में हो चुकी थी। अब मुझे कोई शुबह नहीं रह गया कि उसी ने यह कत्ल किया।'

'और किसी से मिले।' उदय ने पूछा।

'इसकी कोई जरूरत न थी।'

'अच्छा अगर एतराज न हो तो इन तीनों से हम एक बार मिल आवें।

ज्वालासिंह से जाते ही मुलाकात हुई। वह कहीं जाने की तैयारी कर रहा था। उदय ने देखा ज्वालासिंह ३५-४० साल का सिख था, स्वभाव का बहुत ही रूखा और बड़े गुस्सावर मिजाज का। चाकू के बारे में प्रश्न सुनते ही वह खीज उठा। मगर खिदमतसिंह ने भी जब अपनी मूँछ के अन्तिम कोनों को सहलाता हुआ जंगली जानवर जैसा गरज उठा, तब ज्वालासिंह जरा मुलायम हो गये। मगर एक बिलकुल नयी हाथी के दांत के दस्तेदार छुरी उनके सामने फेंक कर बोला, 'यह लीजिये चाकू। उस कम्बख्त दुकानदार से चाकू खरीद कर मैंने बड़ी भारी गलती की। वरना आज बिला वजह आप लोगों की धौंस क्यों सहनी पड़ती।'

खिदमत बेचारे का मुँह काला पड़ गया, इतनी तकलीफ से उसने जो थियोरी खड़ी की थी ज्वालासिंह ने चाकू लाकर उसे बिलकुल बरबाद कर दिया। उदय को देखने से प्रतीत हो रहा था कि वह किसी गम्भीर चिन्ता में निमग्न था। वहां से सब लोग डाक्टर लछमन प्रसाद के मकान पर पहुँचे। डा० साहब कहीं जाने ही वाले थे, अचानक इतने आदमियों को अपने घर आते देख कर गोल कमरा खुलवा कर उन सबको बैठाला। उदय के कुछ कहने स पहिले ही अधैर्य खिदमत बोल उठा, 'डा० साहब आप का चाकू।' उदय ने इशारे से उसे चुप होने को कह कर डा० साहब से पूछा—'क्यों डा० लछमन प्रसाद आप तो डा० प्यारेलाल को तो जानते रहे होंगे ?'

'जी नहीं।'

'क्या कभी डा० प्यारेलाल आप से मिलने भी नहीं आये ?'

'कभी नहीं।'

'आप बिलकुल झूठ कह रहे हैं। अगर डाक्टर प्यारेलाल आपके यहां कभी नहीं आये तो यह कहां से आया।' कह कर जिस चीज को अपनी दोनों

उँगलियों के बीच उठा कर उसने लछमन प्रसाद को दिखाया वह थी एक छोटी सी पर्ची जिस पर डा० प्यारेलाल ने लिखा था, 'लछमन आज शाम ५ बजे के करीब तुम से मिलने आऊँगा, घर ही पर रहना।' उसकी तीक्ष्ण दृष्टि को देख कर मानसिंह मन ही मन धन्य धन्य करने लगा। डा० लछमन ने शीघ्र ही अपने को सम्भाल लिया और हँसने की कोशिश करता हुआ बोला—'मिलना चाहते थे मगर जाने क्यों नहीं आये।'

'आपको मालूम होगा कि उसी दिन रात के किसी समय वे मारे गये।'

'जी हां, मगर आपके कहने का मतलब।'

'मतलब समझाने से पहिले मैं आप से हाथी दांत के दस्ते वाली छुरी जो कि आपने मुहम्मद खां की दुकान से हाल ही में खरीदी थी मेरे सामने पेश करें।' डा० जरा सिटपिटाये और बोले—'वह छुरी मेरे पास नहीं है, कहीं खो गई है।'

'मेहरबानी करके खोज करके रखियेगा, कल हम लोग आयेंगे चाकू लेने।'

खिदमत डा० लछमन को चंगुल में पाकर छोड़ना नहीं चाहता था, इसलिये उदय के कान के पास मुँह ले जाकर बोला, 'सरकार क्या हर्ज है इन्हें हवालात में बन्द करके तफतीस करने में।'

हर्ज कोई नहीं है मगर यह ऐसा मामला है जिस में अदालत के सामने तुम्हें इनके खिलाफ जुर्म साबित करना है और अगर अभी गिरफ्तार कर लोगे तो तुम्हारा सुबूत कुल गड़बड़ा जायेगा।' अप्रसन्न शकल लिये खिदमत उठ खड़ा हुआ और सब लोग सीधे प्रोफेसर अब्दुलहक के बंगले की ओर चल दिये और रास्ते ही में उदय ने खिदमत को कहा कि एक सिपाही सादे में डा० लछमन की निगरानी करने के लिये मुकर्रर कर दिया जावे जो कि उनकी निगाहों से छिप कर उनके हर काम का विवरण हम लोगों को दे सके। दारोगा खिदमत ने तुरन्त वैसा ही किया। रिपुदमन ने सिपाही को यह भी बता दिया कि वह टेलीफोन के जरिये उदय के बंगले पर खबर दिया करे। इत्तिफाक से अब्दुलहक साहब बंगले पर नहीं थे, बल्कि कुल एशिया के शिक्षा विभाग वालों की जो कानफ्रेन्स दो रोज बाद देहली में होने वाली थी, उसी में शरीक होने को चल दिये थे। उदय मि० रिपुदमन को लेकर अपने बंगले लौट कर मोटर से मुश्किल से उतरा ही था कि अर्दली ने खबर दिया कि पुलीस कप्तान साहब टेलीफोन पर बुला रहे हैं। उदय ने टेलीफोन पर पूछा—'क्यों सब खैरियत तो?' तार के उस पार से जवाब आया, 'जी नहीं, डाक्टर लछमन प्रसाद से मिल कर तुम लोगों के जाने से पांच ही मिनट बाद उनकी हत्या कर डाली गयी और माथे पर नं० ३ लिखा हुआ है।'

'मगर उनकी निगरानी के लिये जो सिपाही मैंने लगाया था।'

'अरे भाई उन लोगों के पहुँचने से पहिले ही डा० लछमन मर चुके थे। मेरा तो दिमाग काम नहीं करता। उदय जी आप ही मुझे मदद दीजिये।'

'इसकी आप सर्वथा उम्मीद रखें।' ... बात को ... कप्तान

[४]

उदय का मुख भीषण गम्भीर हो गया था। अस्फुट स्वर में वह बोला—'हत्यारे की हिम्मत खूब है, हम लोगों के जाने के बाद ही उसने हाथ सफा किया।'

मोटर स्टार्ट करते समय उदय ने अविष्कार किया कि मोटर की बैटरी डाउन थी, समय इतना नहीं था कि दूसरी बैटरी मँगवाते। उदय ने यह तय किया कि पुलिस लाइन से कोई गाड़ी ले लेगा।

जाय वकूआ पर पहुँच कर उदय ने देखा कि बड़ी भारी भीड़ डा० के मकान के सामने लगी है। पुलीस वाले किसी को आने-जाने नहीं दे रहे थे। कोई दीवान जा और नया दारोगा कुछ सिपाहियों के सहारे भीड़ को हटाने में लगे थे। उदय को मकान की ओर बढ़ते देख कर दारोगा जी ने रोका और अपने दारोगा पन को दिखाने का यह मौका नहीं छोड़ा। मगर इसी समय मि० हरपालसिंह की

हरीपिकप आकर उदय के पास खड़ी हुई और एक दम से कप्तान साहब उतर कर उदय के कन्धों पर हाथ रख कर बोले—'मैं तुम्हारी उम्मीद में बंगले पर इन्तजार कर रहा था, मगर टेलीफोन से यह मालूम होने पर कि तुम डा० के मकान की ओर गये हो, सीधे यहां चला आया।'

'हां मैं आप ही के यहां जाने वाला था। मगर दुर्भाग्यवश मोटर बिगड़ जाने के कारण उतनी दूर जाकर अपना समय खराब करना उचित नहीं समझा और सीधा यहीं चला आया।'

दोनों बातें करते हुए डा० के मकान के बैठके में जा घुसे। वहां उस समय तक डा० का मृत शरीर तब तक पड़ा था। देखने से मालूम होता था किसी ने पीछे से चाकू मार दिया है। उनके कमरे की तलाशी से जो कागजात मिले उनमें से एक चिट्ठी काम की जँची। चिट्ठी डा० कृष्णमुरारी को लिखते-लिखते डा० लछमन रुक गये थे। उस पर लिखा ... 'प्रिय डा० कृष्णमुरारी मुझे मालूम है आप [illegible] इसलिये मिलने आ रहे हैं कि आपका सन्देह डा० प्यारेलाल की मृत्यु के बारे में उसी आदमी पर है। जिसका इलाज इत्तिफाक से मैं आप और...।'

चिट्ठी यहीं पर समाप्त थी जो क्या सोच कर लछमन ने चिट्ठी को पूरा-पूरा नहीं लिखा था। उदय का चेहरा बहुत ही गम्भीर हो उठा। डा० लछमन प्रसाद के लड़के से दरयाफ़्त करने पर मालूम हुआ कि हाल ही में उसके पिता और शहर के चार-पांच मशहूर डा० लोगों ने महाराजा जूनापुर के लड़के का इलाज किया था और इन्हीं में से किसी की दवा गलती से ले जाने के कारण वह हठात मर गया। राजा साहब ने तो मामले की पुलीस में रिपोर्ट कर दी थी। मगर जाने क्यों पुलीस ने कोई कार्रवाई नहीं की। हरपालसिंह बाधा देकर बोले—'सुबूत न मिलने की वजह से उस मामले में फाइनल रिपोर्ट लगा दी गयी थी। मालूम पड़ता है राजा जूनापुर ही इन कुल कत्लों के पीछे हैं।'

मगर राजा जूनापुर से बातें करके उन्हें हताश होना पड़ा। क्योंकि उनके लड़के का इलाज खास तौर से जिले के सिविल सर्जन महोदय पर दिया गया था और उन्हीं की मातहती में शहर के १५–२० डाक्टर और भी इलाज कर रहे थे। फिर भी हरपालसिंह ने राजा के विरुद्ध खुफिया तफतीस का हुक्म दे दिया।

हरपालसिंह जी चाय के टेबुल पर बैठे उदय से बातें कर रहे थे। मानसिंह और हरपालसिंह जी का लड़का विजयसिंह इस बात को आजमाने में लगे थे कि कौन सबसे अधिक टोष्ट, बिसकुट, अण्डे व मिठाइयां खा सकता है। खाते-खाते विजयसिंह बोला—'मानसिंह जी एक मर्तबा नाम पैदा हो जाये फिर चाहे वैसा ही इलाज करे, लोग उसी डाक्टर को बुलाते हैं। वरना इन्हीं प्यारेलाल, कृष्णमुरारी वगैरह ने हमारे प्रोफेसर अब्दुलहक के लड़के को सोडियम बाई कारबोनेट समझ कर गलती से मरकरी क्लोराइड दे दिया था और उस गरीब ने रुपये भी खोया, साथ ही साथ लड़का भी।' उदय अब तक हरपालसिंह जी से बातें करने में तल्लीन था। टेबिल छोड़ कर उठता हुआ बोला—'बहुत जरूरी काम से मुझे एक जगह जाना है, माफ कीजिये।' फिर मानसिंह की ओर ताक कर बोला—'क्यों मान चलने का इरादा है या अभी और कुछ खाओगे।'

'मैंने खा लिया है और अब चलने में कोई आपत्ति नहीं है।'

'क्यों विजय किस क्लास में पढ़ते हो।'

'दसवीं श्रेणी में।'

'कौन से स्कूल में।'

'नागरमल हायर सेकेण्डरी स्कूल में।' इसके बाद उदय उठ कर चल दिया और दोनों बाहर खड़ी मोटर में जा बैठे। डा० लछमन को जिस चाकू से मारा गया था, उसका दस्ता लकड़ी का था और चाकू विलायती था।

[५]

प्रोफेसर हक लान पर बैठे कुछ लड़कों को पढ़ा रहे थे। उदय को देखते ही बड़े आदर के साथ

गोल कमरे में बैठाला। उदय मृदु हँसी हँस कर बोला 'आपको हम लोगों ने पढ़ाने में बाधा दी।'

'जी नहीं, मैं तो पढ़ाने का विषय छोड़ कर एक ऐसे विषय पर चला गया था, जो दिलचस्प होने पर भी पाठ्य विषय में नहीं है।'

'वह कौन सा विषय था। पूछा मानसिंह ने।'

'मनस्तत्व। हम लोगों के मन का हाल हम लोग स्वयम् नहीं जानते। मन के या दिमाग के अवचेतन अन्श में जो बातें रहा करती हैं वह वैसे तो ख्याल नहीं रहता, मगर क्या चेतना को आच्छन्न कर लेता है। जैसा स्वप्न में लोगों का अवचेतन पन उनके दिमाग पर असर डालती है, चेतना आच्छन्न रहती है। मनुष्य को कभी-कभी यह बीमारी हो जाती है कि वह अपने सचेतन मन की कुल बातों को बिलकुल भूल जाता है और अवचेतन मन के इशारे पर चलता है। वह गरीब स्वयम् भी नहीं जान पाता कि वह क्या कर रहा है और जब वह सचेतन होता है तो उसे याद भी नहीं रहता कि अवचेतन मन के प्रभाव में उसने क्या किया।'

उदय का मुँह प्रोफेसर की बातें सुन कर इतना उज्जवल हो उठा था कि मानसिंह ने पूछा—'शायद उदय तुम यहां प्रोफेसर साहब से सैकोलोजी पढ़ने नहीं आये।' उदय के कानों में यह बातें गयीं ही नहीं। वह प्रोफेसर से बातों में मशगूल था, 'आपके लड़के को क्या बीमारी हुई थी।'

'शायद टाइफायड, मगर यहां के कमबख्त डाक्टरों ने तो कुछ समझा ही नहीं, इलाज तो बड़ी बात थी। कोई भी डाक्टर यह भी पता नहीं लगा सका कि आखिर मर्ज क्या था। इलाज तो बाद की थी। जितने अनाड़ी अप-नेअपने किस्मत का कमाते हैं।'

'इसमें क्या शक है।' बोला उदय – 'मगर आप ने तो चोटी के डाक्टरों को दिखाया होगा।'

'प्यारेलाल, कृष्णमुरारी, लछमन प्रसाद, जगदीश प्रसाद से बड़ा डाक्टर उस जमाने में तो यहां पर कोई नहीं था, मगर लड़का नहीं बचा।'

'अच्छा तो आज हम लोग उठे। आपसे परिचित होकर बड़ी खुशी हुई।' कह कर उदय उठा। मानसिंह ने मृदु स्वर में पूछा—'क्यों उदय चाकू के बारे में नहीं पूछोगे।'

'उसकी कोई जरूरत नहीं।' वहां से उदय सीधे कलेक्टर साहब के बंगले जा पहुँचा और एक पागल की गिरफ्तारी का वारन्ट बनवा लाया।

उदय से यह सुन कर कि वह कातिल को पकड़वा देगा, हरपालसिंह उद्विग्न हुए। बोले —'कातिल को जान कर भी गिरफ्तार नहीं किया, अब क्या वह मिलेगा। जाने कहां उड़ गया होगा।'

'नहीं यह कातिल कहीं नहीं उड़ेगा और न उसे मालूम है कि यह कत्ल करता है।'

'तुम्हारे हाथ वाला पागलों का वारन्ट अपने लिये तो नहीं लिया है उदय।'

'जी नहीं निश्चिन्त रहिये। हमारी बात को थोड़ी देर में आप समझ जाइयेगा।' कप्तान को लेकर उदय सीधे डा० जगदीश प्रसाद के यहां पहुँचा। डा० जगदीश प्रसाद के कुछ कहने से पहिले ही कप्तान साहब बोले – 'आपकी जान की रक्षा के लिये जासूस उदय और मेरी पुलीस की जिम्मेदारी है। हम लोग एक हफ्ता तक आप ही के मकान पर बिना बुलाया मेहमान रहेंगे।'

'मेहमान ! जब तक खुशी आप रहें, मगर मैं मानने पर तैयार नहीं हूं कि मेरी जान का भी कोई खतरा है।'

इसके बाद उदय और पुलिस के चार सिपाही वहीं रह गये। मानसिंह उदय का डाक उसके मकान पर देखता था और साथ ही साथ उन आदमियों की निगरानी करता था, जिन पर उदय का शुबहा था। दो रोज बिना किसी घटना के बीत गये मगर उदय हताश नहीं हुआ। हरपालसिंह के फोन करने पर बोला—'कातिल के खिलाफ यह जुर्म सिद्ध करना बालू में से तेल निकालना है। इसीलिये मैं उसे हाथों हाथ पकड़ना चाहता हूं।'

'तो क्या तुम्हें खतरा है कि कोई और हत्या होने वाली है।'

'जी हां मुझे ऐसा अन्देसा है कि शीघ्र ही डा० जगदीश प्रसाद पर जान लेने का हमला किया जाने वाला है।'

'और तुम्हें यह ठीक-ठीक मालूम है कि हमला करने वाले वही लोग हैं। जिन्होंने पिछली तीनों हत्यायें की।'

'अन्दाजा ऐसा ही है, आगे का हाल ईश्वर जाने?'

तीसरे दिन उदय विमर्ष में पड़ा था, वह सोच रहा था कि क्या अब उसके हिसाब बैठालने में भूल हुई या कोई और बात है। इतने में उसी दिन इन्तजार करना सफल हुआ। उस दिन शाम के छः बजे से ही चारों ओर अन्धेरा घिर आया और बड़े जोरों की आंधी चलने लगी। मजाल क्या कोई बाहर निकले। उदय बाहर की ओर ताके अपनी खिड़की [illegible] बैठा था कि एकाएक किसी परिचित आदमी का चेहरा बाग में दिखाई दिया, वह चेहरा दीर्घ था। बिजली की चमक में उदय ने देखा कि वह व्यक्ति कुछ अजीब शक्ल लिये आगे बढ़ रहा था। आंखें धक-धक जल रही थीं। रूखे बाल हवा में उड़ रहे थे, तीक्ष्ण निगाहों में अपार्थिव दृष्टि हाथ में एक बहुत बड़ा-सा चाकू था। आंखों में मृत्यु की छाया नाच रही थी। वह आदमी सीधे डा० जगदीश प्रसाद के बैठके में जा घुसा। मगर इत्तिफाक से डाक्टर वहां नहीं थे। तब तक अपना वारान्डा पार करके उदय जल्द डा० जगदीश प्रसाद के कमरे की तरफ आ पहुँचा। वह व्यक्ति इधर पीछा किये था। उदय ने पीछे से लिपट कर जो उसे पकड़ा तो उसने चौंक कर मुँह फेरा तो उदय ने देखा कि उस के चेहरे में इतनी हिंसा व गुस्सा भरा हुआ था कि उसे देखने से स्वाभाविक मनुष्य लगता ही नहीं था। वह व्यक्ति और कोई नहीं था। थे स्वयम् प्रोफेसर अब्दुल हक। वे उस वक्त खम्भ सम्पूर्ण उन्माद अवस्था में थे। उदय ने दीर्घ स्वास त्याग कर कहा—वकील प्रोफेसर साहब के इनके अवचेतन मन में उन डाक्टरों के प्रति एक हिंस विद्वेष इकट्ठा हो चुका था। क्योंकि डाक्टरों की गलत दवा से इनका प्यारा लड़का मारा गया। जब-जब इन पर उस खफ्त का दौरा होता है, तब-तब ये एक दूसरे ही मनुष्य! मनुष्य नहीं बल्कि दानव बन जाते थे और कत्ल कर डालते थे...। इस समय भी बेचारा अपने साधारण तथा स्वाभाविक अवस्था में नहीं है।'

लघुकथा

भय

एक बार की बात है। महामारी प्लेग स्त्री का रूप धारण कर किये बनारस की ओर जा रही थी। मार्ग में एक मनुष्य उससे पूछ बैठा—'प्लेग रानी कहां जा रही हो?'

प्लेग ने मुस्करा कर उत्तर दिया—'मैं बनारस में ५ हजार आदमियों को मारने को जा रही हूं।'

कुछ दिनों के बाद बनारस में प्लेग से पचास हजार आदमी मरने के कारण हाहाकार मच गया।

जब महामारी प्लेग उसी मार्ग से फिर लौटी तो वह व्यक्ति अपने घर के चबूतरे पर बैठा हुआ था। उसने जरा दुखी होकर प्लेग से कहा—'तुम तो कहती थीं कि मैं ५ हजार स्त्री-पुरुषों को मारने के के लिये बनारस जा रही हूं, मगर तुमने वहां ५० हजार मार दिये!'

इस पर महामारी प्लेग खिलखिला कर हंस पड़ी और बोली—'भाई, मैं तो ५ हजार को ही मारने को गई थी, किन्तु क्या करूं, बाकी ४५ हजार तो मेरा आना सुन कर डर के मारे अपने आप मर गये।'

धारावाहिक उपन्यास

लेखक, श्री श्रीनाथसिंह

पूर्वकथा—कुमारी आनन्दमयी और नन्दलाल भारतीय क्रांतिकारी दल के सदस्य थे। उन्होंने प्रतिज्ञा की थी कि देश के स्वाधीन होने पर वे परस्पर विवाह करेंगे। संयोग की बात कि देश के स्वाधीन होते ही नन्दलाल के पिता ने उसका विवाह सुलोचना नामक अन्य युवती से कर दिया। परन्तु तिस पर भी आनन्दमयी ने अपना हठ जारी रखा और कलकत्ता में जहाँ ये सब एक कवि सम्मेलन में भाग लेने गये थे, नन्दलाल को इतना विवश किया कि उसे उसके साथ विवाह कर सुलोचना को त्यागने की घोषणा करनी पड़ी। इस पर नन्दलाल के पिता श्री शान्तिस्वरूप ने उसे अपने घर से निकाल दिया। आगे की कथा इस प्रकार है:—

[८]

नन्दलाल अपने घर से निकल तो पड़ा, परन्तु उसके पैर उसे कहां लिये जा रहे थे, वह स्वयम् नहीं जानता था। एक विचित्र प्रकार की शर्म और बेबसी से आक्रान्त उसका मन कुछ सोचने के योग्य न रह गया था। क्यों न एक बार आनन्दमयी के पास वह फिर जाय और उसे कुछ अनुकूल बनाने का यत्न करे?

आनन्दमयी की बातें उसे याद आ रही थीं—'हम क्रान्तिकारी हैं। हमें चौतर्फा क्रान्ति करनी है। समाज को बदलना है, राजनीति को बदलना है, परिवार को बदलना है, व्यक्ति को बदलना है। जीवन में कुछ सिद्धान्त मान कर उनके अनुसार चलना है। जो अपना रास्ता रोके वह चाहे पिता हो, चाहे माता, चाहे पत्नी, चाहे पति, चाहे भाई, चाहे बहन, चाहे कोई हो उसका अन्त कर देना है।'

और उसे याद आ रहा था, आनन्दमयी ने कहा था—'जाओ, अपने पिता से अपने अधिकारों के लिये लड़ो। तुम स्वाधीन हो, अपने मन की पत्नी चुनने में। केवल इसीलिये पिता तुम्हें घर में न रहने दें तो तुम उन्हें शत्रु मानो और उसे अपना अधिकार जनाओ।'

नन्दलाल आनन्दमयी के आदेशानुसार अपने घर गया तो जरूर परन्तु उसे जैसे बुखार चढ़ आया। अपने पिता से अधिकार मांगना तो दूर वह उनके सामने भी जाने का साहस न कर सका और पत्नी से केवल इतना कह सका—'मुझे तेज ज्वर है।

क्या थोड़ा यहां विश्राम करने दोगी ?' और पिता का क्रुद्ध स्वर सुनते ही भाग खड़ा हुआ ?

आनन्दमयी उसकी प्रतीक्षा कर रही थी। पर इतनी जल्दी वह आ जायगा, इसकी आशा उसे न थी। आनन्दमयी को वह इस प्रकार आता प्रतीत हुआ, जैसे कोई मुर्दा उठ खड़ा हुआ हो और चला आ रहा हो। उसके चेहरे पर जीवन की किञ्चित मात्र भी कान्ति न थी।

'आह ! यह कायर है ?' वह बोली—'इसके साथ विवाह करने का कोई माने नहीं हो सकता। तब इसका अन्त कर देना ही ठीक है।' उसने पिस्तौल हाथ में ली और खिड़की के पास तन कर उसकी घात में बैठ गई।

'तैयार हो जाओ।' आनन्दमयी का कर्कश स्वर उसके कानों में गूँज उठा।

नन्दलाल जैसे सोते से जागा। देखा, आनन्दमयी खिड़की पर बैठी है। उसे लगा कि जैसे क्रोध ने उसे और भी सुन्दर बना दिया है। 'ओह, यह ...कितनी महान है और मैं कितना क्षुद्र।' उसके मन में यह भावना बिजली के समान कौंध गई—

'क्रान्तिकारी, मैं अपने को अवश्य घोषित करता था परन्तु मैं परम्परा और सामाजिक रूढ़ियों से जकड़ा हुआ हूं और यह निर्मल अग्नि जैसी साक्षात् क्रान्ति की देवी। मैं इसके योग्य कदापि नहीं था। ओफ, बड़ी भूल हुई और उसका दण्ड तो भोगना ही पड़ेगा।'

'क्या सोचते हो ?' आनन्दमयी फिर गरजी।

'कुछ नहीं, मैं अपना अपराध स्वीकार करता हूं। तुम्हारे प्रति मैंने बेशक अन्याय किया है, भारी अन्याय। मैं, जो अपने पिता की मर्जी के विरुद्ध एक कदम भी किसी तरफ उठाने का साहस नहीं कर सकता, क्रान्तिकारी कहलाने का दावा छोड़ता हूं।'

आनन्दमयी और भी अधिक क्रोधित होकर खट-खट करती हुई दुमंजिले से नीचे उतर आई और नन्दलाल की छाती में पिस्तौल जमाते हुए बोला—'तुम्हें पांच मिनट का समय और देती हूं। अच्छी तरह अपने देवी देवताओं का स्मरण कर लो, ताकि सीधे स्वर्ग जाओ जहां से फिर इस पृथ्वी के मानवों को सताने न आ सको।'

नन्दलाल कुछ बोला नहीं। दृढ़ता पूर्वक आनन्दमयी की ओर एक टक देखता रहा। उसकी आंखों में आंसू उमड़े आ रहे थे।

'मेरी ओर क्या देखते हो ? और ये आंसू क्यों आ रहे हैं। क्या मरना नहीं चाहते।'

'तुम मेरी महत्वाकांक्षाओं की देवी हो। अतएव आंखों में तुम्हारी छवि लेकर मरना चाहता हूं और ये आंसू केवल इसलिए हैं कि मैं प्राण देकर भी तुम्हें वह सुख न पहुँचा सकूँगा जो मैं पहुँचाना चाहता था।'

'पुरुषों के मुख से इसी प्रकार का काव्य शास्त्र सुन कर स्त्रियां धोखा खाती हैं। परन्तु मैं ठिगने वाली नहीं। आंखें बन्द करो, एक मिनट हो गया, चार मिनट और हैं।'

आनन्दमयी अपनी कलाई पर बँधी घड़ी देखने लगी।

एकाएक शोभा वहां आ पहुँची। बोली—'अच्छा, यह कोई नया प्रेमाभिनय है, जिसे आप लोग कर रहे हैं। यह प्रेमाभिनय तो शिव पार्वती के प्रेमाभिनय से भी विचित्र जान पड़ता है।' और उसने आनन्दमयी के हाथ से पिस्तौल ले ली। आनन्दमयी ने जरा भी प्रतिवाद नहीं किया। उसने शोभा को अपने हाथ से इस तरह पिस्तौल ले लेने दिया जैसे वह चाहती रही हो कि कोई आवे और उसके हाथ से पिस्तौल छीन ले।

नन्दलाल बोला—'शोभा बहन, यह अत्यन्त गम्भीर प्रश्न है। इस समय तुम यहां से जाओ।'

'लाओ, मेरी पिस्तौल, हर समय मजाक अच्छा नहीं।' आनन्दमयी शोभा की ओर झपटी। उधर से रसिकेन्द्र आ रहे थे। शोभा ने उन्हें देखा न था, अतएव वह बिना लक्ष्य के भरी पिस्तौल दाग रही थी ताकि उसकी गोलियां खाली हो जायँ और इन

क्रान्तिकारियों का यह खतरनाक प्रेमाभिनय समाप्त हो।

'अच्छा, शोभा रानी पटाखे छुड़ा रही हैं। यह किस खुशी में' रसिकेन्द्र जी बोले।

'पटाखों के धोखे में न रहना, यह पिस्तौल है ?' शोभा ने रसिकेन्द्र की ओर खाली पिस्तौल को तानते हुए कहा।

'शोभा बुरा न मानना, तुम्हारी तो चितवन ही मुझे स्वर्ग धाम पहुँचा देने के लिये काफी है। फिर भला यह पिस्तौल मुझ पर क्यों तानती हो।' रसिकेन्द्र ने और निकट आते हुए कहा।

'कैसा बदतमीज है यह।' आनन्दमयी बोली।

'आनन्दमयी जी, आज मैं तुम्हारी सब बातें सह लूँगा, चाहे जो कहो। क्योंकि मैं तुम्हें एक ऐतिहासिक कवि सम्मेलन में चलने के लिये आमंत्रित करने आया हूं और तुम्हें मेरा निमंत्रण स्वीकार करना ही पड़ेगा।'

आनन्दमयी यह सब सुनने के 'मूड' में नहीं थी। उसका हृदय क्षुब्ध था। बोली—'अपनी कुशल चाहते हो तो अभी इसी दम यहां से चले जाओ।'

'मैं स्वयम् जल्दी में हूं। मेरा निमंत्रण स्वीकार कर लो, बस मैं चला।'

'तुम्हारा कवि सम्मेलन गया चूल्हे भाड़ में। मेरे पास इन फालतू कामों के लिये जरा भी समय नहीं है।'

आनन्दमयी आगे बढ़ी। जान पड़ा सारा क्रोध रसिकेन्द्र पर ही उतारेगी और धक्के दे दे कर उन्हें वहां से हटा देगी।

शोभा ने बीच बचाव किया—'आनन्दमयी बहन, रसिकेन्द्र जी को स्थिति का पता नहीं है। चलो घर के भीतर बैठें, वहां इत्मीनान से बातें होंगी।'

और वह आनन्दमयी का हाथ पकड़ कर स्नेह से उसे घर के अन्दर ले जाने लगी।

नन्दलाल ज्यों का त्यों खड़ा रहा। उसे देख कर शोभा बोली- -'नन्दलाल जी, मेरी एक प्रार्थना स्वीकार कीजिये। मेरे घर पर चलिये, अभी मैं आती हूं।'

'और मुझे भी तो कुछ आदेश दीजिये, शोभा जी।' रसिकेन्द्र ने कहा।

'अरे तुम! चले आओ मेरे पीछे।' शोभा विचित्र ढङ्ग से कहती हुई आनन्दमयी को ढकेलती हुई अन्दर ले जाने लगी। रसिकेन्द्र भी पीछे-पीछे चले।

'खबरदार, जो मेरे घर के अन्दर पैर रखा, तुक्कड़ कहीं के।' आनन्दमयी ने क्रुद्ध सिंहनी सी रसिकेन्द्र की ओर घूर कर देखते हुए कहा।

रसिकेन्द्र के बदन में जैसे आग लग गयी। पूरे जोर से चिल्लाकर बोले—'मैं और सब सह सकता हूं। पर मुझे यह बर्दाश्त नहीं कि कोई मुझे तुक्कड़ कहे। रस शृङ्गार जानने वाला इस समय भारत का मैं एक मात्र कवि हूं। इस १५ अगस्त को दिल्ली के लाल किले में जो ऐतिहासिक कवि सम्मेलन होने जा रहा है, उसमें सभापति के आसन पर बैठने के लिये मैं ही आमंत्रित किया गया हूं। मैं तो [illegible] आमंत्रित करने आया था कि मेरे परिचितों में हो, तुम्हारा भी कुछ महत्व बढ़ाऊँ ? नहीं मानती हो तो लो जाता हूं। मुझे क्या ? श्रीमती सुलोचना देवी जायँगी, उनकी स्वीकृत ले आया हूं। तुम उनके पैर की धोवन भी नहीं हो, तुम्हें पूछता कौन है ?' रसिकेन्द्र इसी प्रकार बड़बड़ाते चले जा रहे थे।

आनन्दमयी शोभा के साथ अन्दर चली गयी और भीतर से किवाड़ बन्द कर लिये।

नन्दलाल अब भी बाहर खड़ा था। उसे सम्बोधित करके रसिकेन्द्र जी कहने लगे—'क्यों नन्दलाल जी, आप ही बताइये मेरा क्या अपराध है ?'

'कुछ नहीं।' कहता हुआ नन्दलाल एक ओर को चल पड़ा। जैसे उसके सामने कोई ध्येय ही न हो।

रसिकेन्द्र का क्रोध शान्त न हुआ था। किवाड़े पर अपने हाथ से चोट करते हुए बोले—'मैं यहां बैठता हूं और तब तक बिना कुछ खाये पिये बैठा

रहूंगा। जब तक आनन्दमयी जी स्वयम् द्वार खोल कर अपने शब्द वापस न लेंगी और मुझसे माफी न मांगेंगी।' और वे जोर-जोर से स्वरचित कवित्त और सवैय्ये गाने लगे।

आनन्दमयी ने कहा—'शोभा, इस तुक्कड़ को मुँह लगाने की अच्छी सजा पा रहे हैं हम लोग। कितना बड़ा मूर्ख है यह ?'

'चाहे जो कहो बहन, पर एक बात तो मानना ही पड़ेगा कि इसका जन-समाज में आदर है। जिस कवि सम्मेलन में पहुँच जाता है, हजारों की भीड़ लग जाती है।'

'पर इसकी कविता में क्या है, सिवाय बेहूदी बातों के ?'

'यह ठीक है, पर यह तो जनता की रुचि है।'

'जनता को रुचि बदलनी होगी। हमें जन-साहित्य का सृजन करना होगा। पतनोन्मुख समाज की नग्न कामुकता का चित्रण साहित्य नहीं है। यह हमें जनता को बताना होगा।'

'पर यह तो तुम कवि सम्मेलनों में उपस्थित हो कर अपनी आदर्श रचनाओं को सुनाकर ही कर सकती हो।'

आनन्दमयी को लगा कि शोभा के कथन में कुछ तथ्य है। बोली—'अच्छा, उस तुक्कड़ से कहो कि इस समय जाय, मुझे उसका निमंत्रण स्वीकार है।'

'मेरी बात मानो।' शोभा ने कहा—'जिस वैवाहिक उलझन में तुम लोग पड़े हुए हो, उसकी गुत्थियां सुलझाने में इनसे काफी मदद मिल सकती है। युवकों और युवतियों के मनोभावों का अच्छा अध्ययन है इन्हें।'

'अच्छा तो बुला लो, पर तुम जानना ?'

'हां, हां।' कहती हुई शोभा दौड़ी गई और रसिकेन्द्र को किसी तरह चुप करा कर अन्दर ले आयी। रसिकेन्द्र ने विजेता की भांति प्रवेश किया और एक गद्दीदार कुर्सी पर बैठ कर आनन्दमयी के कमरे की सजावट देखने लगे।

आनन्दमयी ने कहा—'शोभा सुनो, मेरी समस्या बिलकुल पेचीदा नहीं है। नन्दलाल और मैं दोनों इस प्रतिज्ञा से बँधे हैं कि भारत के स्वाधीन होने पर हम परस्पर विवाह करेंगे। यह प्रतिज्ञा करते समय नन्दलाल बच्चा नहीं था। उसे उसी समय कहना चाहिए था, यह प्रश्न मेरे पिता की स्वीकृति पर निर्भर है। मेरे भी माता-पिता हैं। पर मैं उनकी स्वीकृति की परवा नहीं करती और वे भी मेरे मामले में दखल नहीं देना चाहते। पर नन्द-लाल का पिता रूढ़िवादी है और नन्दलाल उसकी भक्ति से आक्रान्त। सो उसने मेरे साथ की गई प्रतिज्ञा के होते हुए भी अपने पिता के दबाव के कारण सुलोचना से विवाह कर लिया और मुझे कहीं का न रखा।'

'यहां तक तो हो गया, पर अब क्या हो ?'

'वही तो कहने जा रही हूं। नन्दलाल जी चाहते हैं कि सुलोचना भी उनकी पत्नी बनी रहे और मैं भी बनी रहूं। पिता की मृत्यु के बाद सब ठीक हो जायगा।'

'एक सूरत तो यह भी है ?'

'क्या कहती हो शोभा ! क्या आज के युग में किसी शिक्षिता नारी के लिये यह उचित है कि वह किसी ऐसे पुरुष को अपना जीवन सहचर बनावे, जिसके एक पत्नी और मौजूद हो।'

'तो मत बनाओ।' शोभा ने मुस्कराते हुए कहा।

'यहीं मुझे तुम लोगों से तीव्र मतभेद है।' आनन्दमयी ने कहा—'मैं नन्दलाल को इस मामले में क्षमा नहीं कर सकती। यदि उसके पिता की टेक है कि वह अपने बेटे को अपने मन की बहू देगा तो मेरी भी टेक है कि उसके बेटे को मेरे साथ किये गये वादे को निभाना पड़ेगा। नन्दलाल सुलोचना को छोड़े और मेरा पति बन कर रहे। यदि इस प्रकार वह रहने को तैयार नहीं है तो मैं उसे जीवित नहीं रहने दे सकती। मैं कोई खिलौना नहीं हूं कि उसके हाथ में पड़ गई हूं।'

'एक पुरुष के दो पत्नियां हो सकती हैं। यह कोई नयी बात नहीं है। सनातन काल से चला आया है।' रसिकेन्द्र ने कहा।

'चुप जनखे !' आनन्दमयी गरजी—'यह इस युग में न होगा। इस युग की नारी यह कदापि बर्दाश्त न करेगी। इस पर मैं कदापि समझौता करने को तैयार नहीं हूँ।'

रसिकेन्द्र जी अपने लिये जनखे शब्द का प्रयोग सुन कर आग बबूला हो उठे और उत्तर देने के लिये उन्होंने जैसे ही मुँह खोला, शोभा ने अपना पंजा उनके मुँह पर लगा कर कहा—'मित्रवर अब मत बोलो, तुम यह घोषित कर चुके हो कि मुझे तुकड़ मत कहो और चाहे जो कहो। सो आनन्दमयी जी ने तुम्हारे लिये यह नया शब्द चुना है। बस अब बोलो मत।'

शोभा के हाथ का मधुर स्पर्श पाकर रसिकेन्द्र का क्रोध शान्त पड़ गया और वे चुप हो गये।

आनन्दमयी ने कहा—'तुम नन्दलाल से यह अच्छी तरह स्पष्ट कर दो कि उसे अपना वादा पूरा करना पड़ेगा।'

'परन्तु आधुनिक युग में तलाक भी तो है। यदि वह तुम्हारे आदर्शों के अनुरूप नहीं है तो उसे तलाक दे सकती हो। किसी तरह यह किस्सा खतम करो।'

'क्यों रसिकेन्द्र जी !' शोभा ने कहा।

रसिकेन्द्र ने कहा—'मेरी तो ये सुनती ही नहीं हैं। पर सुनें या न सुनें। काव्य शास्त्र के अनुसार अब ये सह-नायका हैं। इन्हें तो केवल इतनी ही चिन्ता करनी चाहिए कि नायक अपने अनुकूल बना रहे। पर ये तो घातक मान ठाने हुए हैं। मान ये जनावें, मानिनी नायका के लिये मान जनाना उचित है।'

आनन्दमयी कुछ कहने ही जा रही थी कि शोभा ने उसे रोका—'बहन, हर्ज क्या है ? कुछ इनकी भी सुन लीजिये।'

रसिकेन्द्र कहते गये—'मुझे तो इस समय मतिराम का एक सवैया याद आ रहा है:—।'

'सवैया और दोहा मैं बहुत सुन चुकी हूं। कुछ काम की बात हो तो कहो, वर्ना चुप रहो।'

'काम की ही बात कहता हूं। आप यही चाहती हैं न कि नन्दलाल एक मात्र आपका होकर रहे और सुलोचना को छोड़ दे।'

'हां।'

'इसके लिये तीन उपाय हो सकते हैं, चौथा नहीं।'

'बताइये वे तीनों उपाय।'

'पहला यह कि आप और नन्दलाल दोनों यहां से भाग कर किसी ऐसे अज्ञात स्थान को चले जायँ, जहां सुलोचना की पहुँच न हो।'

'इसके लिये मैं तैयार नहीं हूं।'

तो दूसरा उपाय यह है कि आप धैर्य से उस दिन की प्रतीक्षा करें जब नन्दलाल के पिता इस लोक में न रहें और वह पूर्ण स्वतन्त्र हो जाय ?'

'इसके लिये भी मैं तैयार नहीं हूं।'

'तो तीसरा उपाय यह है कि आप सुलोचना और उसके ससुर दोनों को जहर दे दें।'

'हां, यह कर सकती हूं।'

आनन्दमयी के मुख से ऐसा वाक्य [illegible] रसिकेन्द्र को क्रोध आ गया। बोले—'तो फिर आप नन्दलाल को नहीं पा सकतीं। यानी उसकी एक मात्र पत्नी का पद नहीं पा सकतीं। यह ध्रुव सत्य है। ज्येष्ठा या कनिष्ठका का ही पद आपको मिल सकता है। सो भी तभी तक जब तक इसके लिये प्रयत्न शील रहें।' यथा—

> बरनत ज्येष्ठ - कनिष्ठका,
> जहँ द्वै ब्याही नारि।
> प्रथम पियारी दूसरी
> घटि प्यारी निर्धारि॥

'अच्छा तो सुनो कविराज ! तुम नन्दलाल के पिता से जाकर कहो कि यदि उन्होंने मेरी और नन्दलाल की शादी को अपनी स्वीकृति न दी और सुलोचना को न छोड़ा तो उन्हें अपने बेटे के जीवन से हाथ धोना पड़ेगा। बस तुम मेरा यह सन्देश जरूर उनसे कह दो।'

रसिकेन्द्र को दिल्ली सम्मेलन का स्मरण हो आया। बोले--'खैर, इस अवसर पर मैं आपको नाराज नहीं करना चाहता आनन्दमयी जी! मैं अवश्य कह दूंगा। परन्तु पहले तुम वादा करो कि दिल्ली वाले कवि सम्मेलन में चलोगी?'

'हां, भाई, चलूँगी।'

'बस तो मैं जाता हूं।' कहते हुए रसिकेन्द्र उठे और बोले—'शोभारानी चलो, तुम भी चलती हो।'

'तुम्हारे साथ कोई भली स्त्री अकेली कहीं जा सकती है?' शोभा खिलखिला कर जोर से हँसी।

रसिकेन्द्र बोले—'शोभा जी, आपको मैंने छोड़ रक्खा है। पर नहीं मानती हैं तो लीजिये, अभी एक छन्द बनाता हूं।'

'अच्छा भाई, ठहरो चलती हूं।' शोभा मुस्कराई।

'नहीं, मैं स्वयम् तुम जैसी स्त्रियों से अपनी रक्षा चाहता हूं।' कहते हुए रसिकेन्द्र जी तेजी से निकल गये।

शोभा ने कहा—'देखो आनन्दमयी बहन, नन्द-[illegible] जी बेबस हैं। उन पर आज मुझे बड़ी दया [illegible] आखिर तो आपने उन्हें अपना पति माना है, तब उन्हें इस सीमा तक न झुकाओ कि तुम्हारा उनका सदा को वियोग हो जाय। उनसे भूल हुई। भूल को वे स्वीकार भी करते हैं। तब उन्हें क्षमा करो।'

'सोचूँगी इस पर।' आनन्दमयी ने कहा—'पर शोभा, बात बिगड़ चुकी है और जो बात बिगड़ चुकी है, वह अच्छा तरह बिगड़े, इसी में मुझे सन्तोष होगा। पर आज के लिये मैं तुम्हें धन्यवाद देती हूं कि तुमने आकर एक भयानक स्थिति को टाल दिया और मुझे कुछ सोचने का मौका दिया।'

आनन्दमयी की आंखों में आंसू छलछला आये, 'कैसे हैं आज के नवयुवक जो हर किसी स्त्री से प्रेम करने को तैयार हो जाते हैं। पर जब उस प्रेम को निभाने का समय आता है तब बगलें झांकने लगते हैं।' उसने बड़ी कठिनाई से इतना कहा और सिसकने लगी।

शोभा ने देखा, यह स्त्री बाहर से जैसी कठोर दिखाई पड़ती है, वैसी वास्तव में नहीं है। उसके हृदय में आनन्दमयी के प्रति गहरी समवेदना उमड़ आयी और उसके भी नेत्र सजल हो उठे।

उसी समय बाहर से द्वार खुला। दोनों ने देखा कि नन्दलाल अत्यन्त गम्भीर मुद्रा में उपस्थित है और कह रहा है—'आनन्दमयी, जो कुछ संकोच-वश मुझसे हो गया उसके लिये मुझे बड़ा खेद है और तुम्हारे प्रति जो अन्याय कर बैठा हूं। उसका वास्तव में जो भी दण्ड भोगूँ थोड़ा है। अतएव यह लो...। यह कहते हुए उसने आनन्दमयी के सामने एक पर्चा फेंक दिया और यह देखो! उसने अपने चौड़े मस्तक पर पिस्तौल तानी। मैं तुम्हारे सामने आत्म हत्या करता हूं। इस पर्चे में लिखा है कि मैं आत्म-हत्या कर रहा हूं। ताकि मेरे पिता या कोई तुम्हें इस अपराध में गिरफ़ार न करावें।'

'हैं! हैं! यह क्या?' कहते हुए दौड़कर शोभा ने उसकी हाथ में दृढ़ता से पकड़ी हुई पिस्तौल का मुँह दूसरी ओर को कर दिया। तभी आनन्दमयी भी वहां आ पहुँची और अपने दांतों से उसकी अँगुलियों पर इस जोर से काटा कि पिस्तौल जमीन पर गिर पड़ी। आनन्दमयी बोली--'मालूम हो गया कि तुम कैसे क्रान्तिकारी हो? मेरी फिक्र मत करो, मरना है तो अपने बाप के सामने जाकर मरो और यह पर्चा भी उसी को दो।'

आनन्दमयी ने गुस्से से उसे ढकेल कर घर के बाहर कर दिया और भीतर से किवाड़े बन्द कर लिये।

[क्रमशः]

उपास्य देवताओं का शृङ्गार वर्णन

पटना
६-८-५१

प्रिय श्रीनाथसिंह जी !

यहां के प्रसिद्ध साप्ताहिक 'योगी' ने आपका उर्मिला-विषयक लेख उद्धृत किया था और उस पर यह टिप्पणी लगाई थी:—

'इस निबन्ध के लेखक का अभियोग है कि, श्री मैथिलीशरण गुप्त ने, 'साकेत' में, लक्ष्मण-पत्नी उर्मिला का चरित्र-चित्रण एक कामातुरा नारी के रूप में किया है। राम, लक्ष्मणादि को ऐतिहासिक पात्र या कवि-कल्पना-प्रसूत मानव मात्र मान कर, उनके चरित्र का जो चित्रण करे, उस कलाकार के ऐसे दोष क्षम्य हो सकते हैं, पर भक्त होने का दावा करने वाला महाकवि, जब उपास्य देवताओं का शृङ्गार-वर्णन करने लगे तो आपत्ति की गुंजाइश हो जाती है। जगज्जननी पार्वती के नख-शिख वर्णन के पाप से महाकवि कालिदास के कुष्ट-ग्रस्त हो जाने की कथा सुनते हैं, पर शायद, इस युग में यह नहीं होता।'

इस टिप्पणी की कतरन मैं आपके पास इसलिये भेज रहा हूं कि आपके पाठक भी इसे पढ़ लें। 'योगी' में आपका लेख और यह टिप्पणी छपने के बाद पटना के साहित्य जगत में बड़ी हलचल मची। अधिकांश लोगों ने आपके लेख और योगी की टिप्पणी को पसन्द किया।

परन्तु पटना में कोई साहित्यिक चर्चा हो और उसमें श्री बेनीपुरी जी न कूद पड़ें, यह कैसे हो सकता है। सो वे आपके लेख और टिप्पणी दोनों के विरोधी के रूप में प्रकट हुए हैं। आपके तर्कों का और उनसे भी जोरदार योगी की टिप्पणी के तर्कों का उनके पास कोई उत्तर नहीं है, तथापि वे विरोध कर रहे हैं ताकि पांचों सवारों में उनकी भी गिनती बनी रहे। उनका अनर्गल प्रलाप चिट्ठी-पत्री के रूप में उन्हीं की असफल पत्रिका 'नयी धारा' में प्रकाशित हुआ है। शायद इसलिये कि और कोई पत्र उसे छापने को तैयार नहीं हुआ। उसकी कतरन भी मैं आपके अवलोकनार्थ भेज रहा हूं। आप देखेंगे कि उस चिट्ठी-पत्री में आप द्वारा उठाये गये प्रश्नों का उत्तर न देकर श्री मैथिलीशरण गुप्त की चापलूसी की गयी है। वह शायद इसलिये कि गुप्त जी अपने 'साहित्यकार संसद' में बेनीपुरी जी को भी कोई छोटी-मोटी महन्ती का पद प्रदान करें। आशा है कि आप इन बाहर से प्रगतिशील परन्तु [illegible] पूरे शृङ्गारी और प्राचीनता वादी साहित्यकारों की बन्दर घुड़कियों से विचलित न होंगे और देवी-देवताओं का नग्न-शृङ्गार वर्णन करने वाले कवियों की वे चाहे श्री मैथिलीशरण हों, चाहे जो हों, इसी तरह खबर लेते रहेंगे। मैं आपको विश्वास दिलाता हूं कि इस दिशा में सम्पूर्ण हिन्दी जगत आपके साथ है।

आपका
एक हिन्दी पाठक

प्रियवर !

आपका कृपा पत्र मिला। उर्मिला के विरह-वर्णन के नाम पर गुप्त जी ने जो अश्लील और गंदे छन्द लिखे हैं, उनको यह युग कदापि नहीं अपना सकता और एक नहीं लाख बेनी पुरी जन्म लें और एक नहीं लाख नयी धाराओं से धोवें तो भी वे गुप्त जी की यह कलङ्क कालिमा नहीं धो सकते। बेनीपुरी के व्यक्तिगत आक्षेपों का न तो मैं जिक्र ही करना चाहता हूं न कोई उत्तर ही देना चाहता हूं। पर वे जो कहते हैं कि साकेत को उन्होंने जेल में पढ़ा है

और उस सर्ग से जिस पर मैंने आपत्ति की है, वे खास तौर से भाव विभोर हुए हैं तो इच्छा न रहते हुए भी यह कहना पड़ता है कि बेनीपुरी ने अपने अमूल्य जेल जीवन को व्यर्थ के मानसिक व्यभिचार में बरबाद कर दिया क्योंकि साकेत का वह स्थल कवि के मानसिक व्यभिचार के सिवाय और कुछ नहीं है।

गुप्त जी का उर्मिला जैसी आदर्श नारी का विरह वर्णन कितना भ्रष्ट शृङ्गार पूर्ण है कि उसे पढ़ते और 'दीदी' में उद्धृत करते लज्जा मालूम होती है। परन्तु हिन्दी के पाठकों को इसका पता हो और इस अनर्थ को रोक-थाम हो, इसलिये गुप्त जी के इस काव्य की एक स्वतन्त्र लेख में चर्चा कर रहा हूं, जो 'दीदी' के इसी अङ्क में अन्यत्र प्रकाशित है। आप भी सोचें और बेनीपुरी जैसे हर पक्ष की वकालत के लिये तैयार हो जाने वाले चापलूस भी सोचें कि क्या कोई भला आदमी उन छन्दों को अपने परिवार में बहन बेटियों के बीच में पढ़ सकता है? और क्या कोई भला अध्यापक उन्हें अपने छात्रों और छात्राओं को लज्जा से बिना मस्तक नीचा किये पढ़ा सकता है?

विनीत
श्रीनाथसिंह

कैदी बच्चे

ये उत्तरी कोरिया के उन कम्युनिष्टों के बच्चे हैं, जिन्हें अमरीकन और राष्ट्र संघ की फौजों ने युद्ध बन्दी बनाया है। अब अमेरिका की ओर से यह प्रबन्ध किया गया है कि इनकी शिक्षा में अन्तर न पड़े। अतएव इनके लिये स्कूल खोले गये हैं। पीछे अमरीकन सेना की नर्स खड़ी है, जो इस स्कूल का सञ्चालन करती है।

इस कन्या का नाम क्या रक्खूँ ?

प्रश्न—कोई ५ वर्ष की प्रतीक्षा के बाद मेरी गोद में एक कन्या आई है। मैंने स्वप्न में भी न सोचा था कि मेरे कन्या होगी। मैं सोचती थी कि पुत्र ही होगा और उसका नाम विनोद रक्खूँगी। पर अब इस कन्या का नाम क्या रखूँ ?

उत्तर—हमारी समझ में इस कन्या का नाम आशा रखना ठीक होगा। क्योंकि इसने आपको सृष्टि कर्ता के सम्पर्क में ला दिया है और अब आप यह आशा कर सकती हैं कि जिसने आपको यह कन्या रत्न दिया, वह पुत्र भी प्रदान कर सकता है ?

सुन्दर पैर

प्रश्न—मेरे पैर यों काफी सुन्दर हैं। परन्तु उन पर अक्सर मैल जमी रहती है। मैं कई बार धोती हूं। वे मैले ही रहते हैं। कोई उपाय बताइये ?

उत्तर—पैरों पर बार-बार पानी उड़ेलना और बात है और रगड़-रगड़ कर उनका मैल साफ करना बिलकुल दूसरी बात। जान पड़ता है आप पैरों पर यों ही पानी डालती रहती हैं। पर मैल छुड़ाने का यत्न नहीं करतीं। चलने-फिरने में अन्य अंगों की अपेक्षा पैरों पर गर्द अधिक जमती है क्योंकि वे खुले रहते हैं और धूल के सम्पर्क में भी अधिक आते हैं। इसलिए दिन में उन्हें कम से कम एक बार तो जरूर ही साबुन से या यों ही भीगे तौलिये से खूब रगड़ कर धोइये। ऐसा एक हफ्ते कीजिये और आगे भी जारी रखिये। फिर कोई भी शिकायत न होगी।

हरितालिका व्रत

लेखिका, श्री प्रभा उपाध्याय 'प्रभाती'

इस व्रत को तीज भी कहते हैं।

यह व्रत भादो के शुक्लपक्ष की तृतीया को मनाया जाता है। कुँवारी लड़कियां इच्छित वर के लिए और सौभाग्यवती स्त्रियां अखंडित सोहाग के लिए इस व्रत का अनुष्ठान करती हैं। विद्यार्थी स्त्रियां भी इस व्रत को मानती हैं। भगवती पार्वती तथा भगावन शिव इस व्रत के देवता हैं।

विधि—

व्रत करने वाली स्त्री को सूर्योदय से पूर्व उठना चाहिये फिर नित्य क्रम से निवृत होकर मांगलिक वस्त्र धारण करना चाहिये। फिर सन्धा वदंना से निपट कर किसी स्वच्छ स्थान में शिव पार्वती का मंडप बनाना चाहिये और बन्दनवार से इसे सजाना चाहिये। फिर कलश रखकर उस पर घृत का दीप जलाना चाहिये और पूर्व की ओर मुख करके तथा आचमन करके शिव पार्वती को स्मरण करना चाहिये और अखंडित सौभाग्य की कामना करना चाहिये। फिर देवत की विधिवत पूजन करें। पश्चात कथाश्रवण करके ब्रह्मण भोजन करावें। शेष दिन व शेष रात्रि निरहार रहें और जल भी न गृहण करें। दूसरे दिन प्रातकाल स्नान करें और नये वस्त्र धारण कर प्रतिमा का विसर्जन करे तथा पारण करें।

कथा

नाना प्रकार के वृक्षों पशुओं तथा भूमि से सुशोभित हिमालय पर्वत है यहां देवता तथा गन्धर्व तक भ्रमण करते हैं। इसी रमणीक स्थान में पार्वती की बाल्यावस्था बीती थीं। पार्वती शैलराज की कन्या थीं। पार्वती ने पैसंठ वर्ष तक सूखे पत्तो का अहार करके, माघ मास में जल के अन्दर खड़ी होकर, पंचाग्नि के बीच में बैठकर, वर्षाकाल में बाहर खड़ी होकर, भगवान शिव की प्राप्ति के लिए घोर तपस्या की। पुत्री की तपस्या देखकर शैलराज चिन्तित हुये और योग्य वर की खोज करने लगे।

इसी समय ब्रह्मा पुत्र नारद पार्वती के दर्शनार्थ वहां पहुँचे। शैलराज के पूछने पर नारद ने भगवान विष्णु का प्रस्ताव रक्खा जिसमें कि उन्होंने पार्वती से पाणिगृहरण की इच्छा प्रकट की थी। पर्वतराज बड़े प्रसन्न हुए। लेकिन पार्वती बड़ी दुखी हुई उनको चिंतामग्न देखकर एक सखी ने इस का कारण पूछा। इसपर पार्वती ने उत्तर दिया—"सखी मैं शंकर को पतिरूप में वरण कर चुकी हूं पर पिता ने मेरे लिए विष्णु को वर चुना है। इसी से मैं चिंतित हूं सखी तुम मेरी सहायता करो"।

इस पर पार्वती की सखी ने उन्हें एक घोर बन में पहुँचा दिया। वहां एक गुफा में शिव की बालू की मूर्ति बनाकर उसकी पूजा करने लगी इधर शैलराज ने पार्वती की बहुत खोज की पर उन का पता न लगा। धीरे-धीरे भादो को तृतीया आई उस दिन पार्वती ने शिव की विधिवत पूजा की और रातभर जागरण कर गायन किया। इस महाव्रत से शिव का आसन डगमगा उठा और वे पार्वती को वरदान देने गुफा में पहुँचे। शिवजी के पूछने पर पार्वती ने कहा"—हे भगवान मैं आपको पति रूप में प्राप्त करना चाहती हूं।" "तथास्तु" कह कर शिव ने कैलास की ओर प्रस्थान किया।

उसी दिन से वर्ष में एक दिन इस व्रत का स्त्रियां अनुष्ठान करती हैं। हरितालिका का व्रत प्रत्येक सौभाग्यवती स्त्री को निर्जल तथा निराहार रहकर करना चाहिये।

आवश्यकता है

दीदी और बालबोध बेचने के लिये हर शहर या कस्बे में एजेण्टों की शर्तों के लिये पत्र लिखें।
मैनेजर—'दीदी' कार्यालय, इलाहाबाद

दीदी का संकट टला

कलकत्ता नेशनल बैंक लि०, जिसमें दीदी कार्यालय के पास जो भी नकद धन था, जमा था, के एकाएक फेल हो जाने से 'दीदी' पर भारी अर्थ संकट आ उपस्थित हुआ था। दीदी के प्रेमी पाठकों को यह जान कर हर्ष होगा कि यह संकट बहुत कुछ काबू में आ गया है और अब दीदी के बन्द होने का किञ्चित मात्र भी अन्देशा नहीं रहा।

नकद पूँजी तो अभी भी हमारे पास कुछ नहीं है, परन्तु इन संकट के महीनों में जिन ग्राहकों का वार्षिक मूल्य समाप्त होता था, उनसे नया वार्षिक [illegible]ाने पर हमारा काम चल गया।

[illegible] आमदनी खर्च का ड्यौढ़ किसी कदर बँध गया है और पत्रिका कदापि बन्द नहीं हो सकती। यह जरूर है कि उसमें थोड़ी बहुत कमियां हो सकती हैं। पर आशा है, विषम स्थिति का ख्याल करते हुए पाठक उनके लिये क्षमा करेंगे।

दीदी के कर्जदाताओं की उदारता

इस संकट की घड़ी में हमें सबसे अधिक चिन्ता इस बात की थी कि हम अपने उन कर्जदाताओं को अगर वे अपना धन वापस मांग बैठेंगे, क्या जवाब देंगे, जिन्होंने ऐसी ही दूसरी संकट की घड़ी में दीदी को कर्ज देकर सहायता की थी। और इसीलिए हमने और भी दीदी को बन्द करने का इरादा कर लिया था, ताकि प्रेस सामान जिसमें उनका धन लगा है बेच कर उनका धन वापस किया जा सके। परन्तु यह लिखते हुए हमें अपार हर्ष हो रहा है कि इस संकट की घड़ी में हमारे एक भी कर्जदाता ने अपना रुपया वापस नहीं मांगा, बल्कि जो दो एक मांग भी रहे थे, वे चुप हो गये। कितनों ही ने संरक्षक बनने की इच्छा प्रकट की और श्री बल्देवदास मूँधड़ा बन भी गये। निश्चय ही यह बहुत बड़ी उदारता हमारे कर्जदाताओं ने दिखाई है और इस कृपा के लिये हम उनके प्रति सदैव कृतज्ञ रहेंगे।

दो और संरक्षिका

हमें यह सूचित करते हुए हर्ष होता है कि श्रीमती स्नेहलता नेवाटिया वालियायवन बम्बई और श्रीमती चन्द्रावती एस० कानोडिया, समुद्र तरंग बम्बई दीदी की संरक्षक बन गयी हैं। श्रीमती स्नेहलता लिखती हैं :—

'दीदी' आर्थिक संकट में है, यह जानकर खेद हुआ। इस पत्र के साथ १००) रु० भेज रही हूं। मैं आशा करती हूं कि भविष्य में 'दीदी' का आर्थिक संकट दूर हो जायगा और वह सर्वसाधारण के मनोरंजन की प्रधान पत्रिका हो जायगी।

स्नेहलता नेवटिया

इन सामयिक सहायताओं के लिये हम बहुत कृतज्ञ हैं। दीदी पर संकट काल सदैव न रहेगा। परन्तु इनकी और इनके जैसे अन्य शुभेच्छुओं की सहायता दीदी को सदैव स्मरण रहेगी और उसके पृष्ठों में इनका नाम अमर रहेगा।

३० लाख स्त्रियां वोट न देने पाएँगी

भारतीय संसद में एक प्रश्न के उत्तर में सरकार की ओर से बतलाया गया कि आगामी चुनावों में ३० लाख स्त्रियां वोट न देने पावेंगी। इसका कारण यह है कि जब मतदाताओं की सूची तैयार

की जा रही थी। तब इनका नाम प्रकट नहीं होने पाया। इसमें सब से अधिक संख्या बिहार की स्त्रियों की है। यह शायद इसलिए कि बिहार में अभी भी पर्दा अधिक है। परन्तु जिन स्त्रियों के नाम सूची में दर्ज हैं, वे सभी वोट देने जायँगी, यह भी नहीं कहा जा सकता। उनमें भी अधिकांश पर्दे के कारण घर पर ही बैठी रहेंगी। जो वोट देंगी भी वे अपने पतियों के इशारे पर देंगी। इस युग में पर्दा तो एक दम दूर ही हो जाना चाहिये और स्त्रियां अपना मत स्वतन्त्र रूप से व्यक्त कर सकें, इसके लिये अनुकूल वातावरण तैयार हो जाना चाहिये।

लात के देवता

'लात के देवता बात से नहीं मानते' यह पुरानी कहावत है। अहिंसा का पुजारी होने के कारण भारत इसे भुलाए हुए था और इसीलिए पाकिस्तानी चिलपों मचाए हुए थे और जेहाद और युद्ध से नीचे बात ही नहीं करते थे। परन्तु जब भारत ने सीमा पर सेना डटा दी और जहां लात की जरूरत है वहां लात लगाने को तैयार हो गया तब पाकिस्तानियों का युद्ध ज्वर उतर गया।

पैदा करे पुरुष और खर्च करे स्त्री

पारिवारिक आनन्द में जो वृद्धि चाहते हैं उन्हें यह बात मान लेनी चाहिए कि धन पैदा करना पुरुष का काम है और खर्च करना स्त्री का। जिस देशों में स्त्रियों आर्थिक स्वतन्त्रता की मांग करती हैं उन देशों में बहुत करके यह बात होती है कि पुरुष पैदा भी करता है और वही खर्च भी करता है।

यह बात एक अंग्रेजी मनोवैज्ञानिक ने हाल ही में कही है। हमारे भारतवर्ष में यह प्रथा अनादिकाल से चली आ रही है। परन्तु हां, जिन परिवारों में अंग्रेजियत अधिक आ गई है उनमें पुरुष ही खर्च करने का भी अधिकारी बन बैठा है। आशा है ऐसे परिवारों का ध्यान इस ओर जायगा और वे अपनी गृह प्रणाली में सुधार करेंगे।
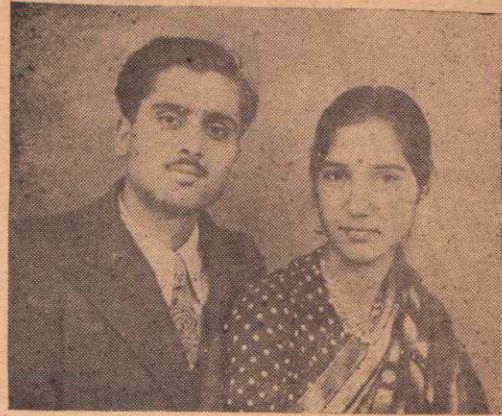
एक शुभ विवाह

वर्तमान के सम्पादक पं० रमाशङ्कर अवस्थी की पुत्री आयुष्मती सरोजिनी और श्री जगदीशकुमार शुक्ल एम० ए० एल० एल० बी० (सुपुत्र पं० नर्मदेश्वर प्रसाद जी शुक्ल) जिनका शुभ विवाह हाल ही में सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर पं० राधेश्याम [illegible] वाचक बरेली ने जो आशिर्वाद वर वधू [illegible] था वह हम यहां उद्धृत करते हैं :—

बनी बना दीर्घायु हों, पालें कुल मर्याद।
देशभक्त हरिभक्त हों, है यह आशिर्वाद।

नये ग्राहक बनाये

निम्नलिखित ने 'दीदी' के नये ग्राहक बनाये हैं। इस कृपा के लिये इन्हें हम हार्दिक धन्यवाद देते हैं :-

कुमारी कमला माथुर,	बरेली	२ ग्राहक
पं० विशनाथ मिश्र,	अहमदाबाद	,,
श्रीमती कृष्णाकुमारी	बरबीघा	१ ग्राहक
श्री वीना भटनागर	कांगड़ा	,,
श्री सी० पद्मनाभान	जयपुर	,,
श्रीमती तारादेवी श्रीवास्तव	मोतिहारी	,,
श्रीमती सावित्रीदेवी	कनकिनारा	,,
श्री कौशल्या कुमारी	शिलांग	,,
श्रीमती सावित्रीदेवी बागड़	कलकत्ता	,,
श्रीमती अमृता लोयलका	बम्बई	,,

बाँझ स्त्रियों के लिए

सन्तान पैदा करने का लासानी नुस्खा

मेरी शादी हुए १५ वर्ष बीत चुके थे। इस समय के बीच मैंने सैकड़ों इलाज कराए, लेकिन कोई सन्तान पैदा न हुई। सौभाग्यवश मुझे एक वृद्ध महापुरुष से निम्नलिखित नुस्खा प्राप्त हुआ। मैंने उसे बनाकर सेवन किया। ईश्वर की कृपा से नौ मास बाद मेरी गोद में बालक खेलने लगा। इसके पश्चात् मैंने जिस सन्तानहीन बहन को इसका सेवन कराया उसी की आशा पूरी हुई। अब मैं इस नुस्खे को सूचीपत्र द्वारा प्रकाशित कर रही हूँ ताकि मेरी निराश बहनों की आशा पूर्ण हो।

औषधि तन्त्र ये है — असली नैपाली कस्तूरी (जिस पर गवनमेंट की मोहर हो) केसर, जायफल, सुपारी दक्खिनी, हर एक साढ़े दस माशे, पुराना गुड़ (जो कम से कम दस साल का हो) तेरह माशे, भुनी हुई भङ्ग दो माशे, लौंग चार अदद, कांठयारी सफेद की जड़ (यानी सत्यानाशी सफेद की जड़) सवा तोला, इन सब औषधियों को खरल में डालकर २४ घंटे तक खरल करें और पानी इतना मिलावें कि गोलियां बन सकें, फिर जङ्गली बेर के बराबर गोलियां बना लें। इसके सेवन से गुप्त बीमारियां दूर हो जाती हैं और बहनें इस लायक हो जाती हैं कि सन्तान पैदा कर सकें।

रीति—गाय के थोड़े गरम दूध में मीठा डालकर प्रातःकाल और सायङ्काल एक-एक गोली तीन दिन तक सेवन करें। ईश्वर की कृपा से कुछ रोज ही में आशा की झलक दिखाई देने लगेगी।

नोट—औषधि-तन्त्र के अन्दर सफेद फूल वाली सत्यानाशी की जड़ मिलाना आवश्यक है, क्योंकि इसके अन्दर सन्तान पैदा करने के अधिक गुण हैं।

इसके विषय में श्रीमान् राधेश्याम जी हापुड़ से लिखते हैं—मेरी समझ में नहीं आता कि आपकी सन्तान पैदा करने वाली औषधि की मैं किन शब्दों में प्रशंसा करूं! मैं आपको हर्ष के साथ सूचित करता हूँ कि आपकी औषधि से मेरी स्त्री को १६ वर्ष के पश्चात् बालक की प्राप्ति हुई। सरदार दत्तसिंह भटिंडे से सूचित करते हैं कि आपकी सन्तान पैदा करने वाली औषधि एक अद्भुत जादू है, मैं इसकी जितनी प्रशंसा करूं कम है। मैं नहीं जानता था कि आपकी औषधि में इतने गुण भरे हुए हैं! हमारे शहर में आपकी औषधि की घर-घर प्रशंसा हो रही है। अब तक करीब-करीब बीस से ज्यादा बहिने गर्भवती हो चुकी हैं। कृपया तीन दर्जन शीशी वी० पी० से भेज दें। धन्यवाद।

ऐसे अनगिनती प्रशंसा-पत्र मेरे पास हैं। अगर कोई बहिन देखना चाहे तो मेरे पास आकर देख सकती है।

मेरी सन्तानहीन बहिनो,

आप इसे बेगुण औषधि न समझें। यदि आप बच्चे की माता बनना चाहती हैं तो इसे बनाकर जरूर सेवन करें। मैं आपको विश्वास दिलाती हूँ कि इसके सेवन से आपकी अभिलाषा अवश्य पूर्ण होगी

यदि कोई बहन इस औषधि को मेरे हाथ से ही बनवाना चाहें तो मुझे पत्र द्वारा सूचित करें। मैं उन्हें औषधि तैयार करके भेज दूँगी। एक बहिन की औषधि पर पांच रुपये बारह आने खर्च आते हैं। महसूल डाक इससे अलग है।

रतनबाई जैन, (२४) सदर बाजार, थाना रोड, देहली

दीदी के संरक्षक

१—श्रीमती राजकुमारी ठोलिया, उज्जैन २००)
२—श्री बल्देवदास मूँधड़ा, कलकत्ता १००)
३—श्रीमती स्नेहलता नेवाटिया, बम्बई १००)
४—श्रीमती चन्द्रावती एस० कानोडिया, बम्बई १००)

'दीदी' के नियम

(१) 'दीदी' मासिक पत्रिका है। इसका वार्षिक मूल्य ६) और एक प्रति का ।।) है। वार्षिक मूल्य कार्य्यालय में पहुँचते ही ग्राहक का नाम रजिस्टर में दर्ज हो जाता है और पत्रिका जानी शुरू हो जाती है।

(२) जो महानुभाव १००) या इससे अधिक की रकम एक साथ भेजेंगे वे 'दीदी' के संरक्षक माने जायेंगे। उनका नाम दीदी में इस रूप में बराबर छपेगा और पत्रिका उन्हें जीवन पर्यन्त निशुल्क मिलती रहेगी।

(३) रुपया पैसा, वार्षिक मूल्य और प्रबन्ध सम्बन्धी पत्र आदि प्रेमलता देवी संचालिका 'दीदी' कार्य्यालय, इलाहाबाद के पते से भेजना चाहिए।

(४) पत्र-व्यवहार करते समय ग्राहकों को अपना ग्राहक नम्बर अवश्य लिखना चाहिये। पत्र-व्यवहार का पता यह है—संचालिका 'दीदी' कार्य्यालय, इलाहाबाद।

(५) 'दीदी' हर महीने में पहली तारीख [illegible] प्रकाशित हो जाती है। पहली तारीख के आसपास यदि 'दीदी' आपको न मिले तो आपको तुरन्त अपने डाकघर से पूछना चाहिये। अगर पता न लगे तो १५ तारीख के भीतर संचालिका 'दीदी' इलाहाबाद को लिखना चाहिये।

(६) यदि एक-दो मास के लिये पता बदलवाना हो तो डाकखाने से प्रबन्ध कर लेना चाहिए। यदि साल भर या अधिक काल के लिये पता बदलवाना हो तो उसकी सूचना मय ग्राहक नम्बर के हमें देनी चाहिये।

(७) लेख, फोटो, बदले के पत्र, समालोचना के लिये पुस्तकें सम्पादक 'दीदी' इलाहाबाद के पते से भेजना चाहिये।

(८) न छपने की हालत में वे ही लेख वापस किये जायँगे जिनके साथ आवश्यक स्टाम्प होगा।

(९) 'दीदी' में विज्ञापन छपाना हो तो उसके नियम अलग से मँगावें। पर यह ध्यान रखें, 'दीदी' में अश्लील व झूठे विज्ञापन नहीं छापे जाते।

मुद्रक और प्रकाशक श्रीनाथसिंह 'दीदी' प्रेस, इलाहाबाद।